त्याग की प्रतिमा

लेखिका, वेदना

१

'नाथ ! इस दासी से कोई अपराध बन पड़ा है जो आप सदैव उदासीन रहते हैं। मुझे इस घर मे आए आज दो माह हो गए किन्तु आप एक बार भी हँस कर न बोले। जब से आई हूँ आपको चिन्ता मग्न ही देखा है। देव, अपनी चिन्ता का कारण बताइए। मैं उसे दूर करने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दूँगी, किन्तु मुझसे आपकी उदासी नहीं देखी जाती। सोचा करती थी कि आपकी सेवा का सौभाग्य पा सकूँगी, और आपको प्रसन्न-बदन देख कर अपने जीवन को सफल बना सकूँगी, किन्तु देखती हूँ कि मैंने तो आपको शोक के अथाह समुद्र ही में डुबो दिया। मैंने आपके हर्ष और स्वतन्त्रता को छीनने के अतिरिक्त आज तक आपकी और कोई भी सेवा न की। स्वामी ! मेरे अप-राध को क्षमा कर दीजिए। आपकी चिन्ता निवारण का मैं भरसक यत्न करूँगी।' शौर्येन्द्र की नवविवाहिता पत्नी शालिनी ने रुआसी सी हो कर कातरता से अपने पति की ओर देखते हुए कहा।

'कुछ बात नहीं है शालिनी ! मेरी प्रकृति ही ऐसी है। तुम किसी बात की चिन्ता न करो।' अनायास ही शौर्येन्द्र के मुँह से दीर्घ निःश्वास निकल गई।

'नहीं हृदय देव ! कुछ तो अवश्य है। आप अपनी इस दासी से छुपा रहे हैं, किन्तु आप मेरे आराध्य देव हैं। अपनी पुजारिन से कुछ न छिपा पावेंगे। बताइए क्या बात है।'

किन्तु शौर्येन्द्र ने रूखी हँसी के अतिरिक्त और कोई उत्तर न दिया। थोड़ी देर चुप रहने के बाद निस्तब्धता को भंग करती हुई शालिनी शंकित स्वर में बोली—यदि आप क्रुद्ध न हों तो एक बात कहूँ।

'कहो।'

'किन्तु ...... किन्तु आप क्रुद्ध तो न होइएगा।'

'नहीं शालिनी। तुम निशंक हो कर कहो।'

'मैंने सुना है कि कोई सुधा मिश्रा हैं। उन पर आपका अपार प्रेम था और अब भी है. किन्तु मैंने आ कर आपके सुखी जीवन की सुन्दरतम कल्पनाओं के महल को ढहा दिया। क्यों नाथ, क्या यह सत्य है ?' शालिनी ने डरते डरते शौर्येन्द्र की ओर देखते हुए कहा।

'हाँ शालिनी ! यह सर्वथा सत्य है।' शौर्येन्द्र ने [illegible] राधी की भाँति उत्तर दिया।

'तो देव इसमें इतने रञ्ज की कौन बात है। आपने मुझसे पहिले क्यों न कहा जो इतने दिन तक विरहाग्नि में जलते रहे। मैं पहिले ही आपका विवाह सुधा बहिन से करवा देती।' शालिनी ने अपने दुःख के आवेग को प्रयत्न से राकते हुए कहा।

'हँस रही हो। मैंने तो तुम्हारे साथ विश्वासघात किया है। शालिनी, मैं बड़ा पापी हूँ जो अपने साथ साथ तुम्हारे जीवन को भी नष्ट कर दिया।'

'नहीं मेरे स्वामी ! ऐसा कह कर मुझे नर्क में न घसी-टिए। मैं तो आप जैसा पति पा कर धन्य हो गई। मुझे तो केवल आपके चिन्तित रहने का ही दुःख था, सो आज मैंने उसका भी कारण जान लिया। अब आप सुधा से विवाह करके उसके तथा अपने दुःख को दूर कीजिए।'

'क्या कह रही हो ? यह कैसे हो सकता है ?' शौर्येन्द्र ने लज्जा युक्त नेत्रों से शालिनी की ओर देखते हुए पूछा।

'हो सकता है और अवश्य होगा। सुधा मेरी बहिन हो कर अब इस घर पर शासन करेगी। उसका भी आप पर उतना ही अधिकार है जितना मेरा है। आप मेरी ओर से निश्चिन्त रहें। मुझको इससे तनिक भी रञ्ज न होगा, प्रत्युत प्रसन्नता ही होगी कि मैं आपकी चिन्ता दूर करके आपको सुखी कर सकी।'

'शालिनी, यह उतना ही असम्भव है जितना आकाश से फूलों की वर्षा होना असम्भव है। तुम्हारा स्थान अब और कोई नहीं ग्रहण कर सकता।' शौर्येन्द्र ने निराश भाव से कहा।

'तो मैं इतनी कच्ची ही कब हूँ जो अपना स्थान छोड़

...पना अधिकार किसी को नहीं दे सकती, किन्तु ...धिकार छीनना भी तो मेरा धर्म नहीं है। आपके ...ा बहिन का भी अधिकार है और मैं उसका ही अधिकार उसे दे रही हूँ।"

'किन्तु भावी इस बात पर कभी तत्पर नहीं होंगी।' शौर्येन्द्र ने कृतज्ञता पूर्ण नेत्रों से शालिनी को देखते हुए कहा।

'मैं उन्हें मना लूँगी। सब प्रबन्ध हो जाएगा।"

२

"भावी जी, आप सुधा मिश्रा को जानती हैं ?" शालिनी ने दोपहर को सब कार्यों से निवृत हो कर अपनी जिठानी रेखा से पूछा।

'हाँ जानती तो हूँ। क्यों क्या बात है ?' रेखा ने जिज्ञासा पूर्ण वाणी से पूछा। 'कुछ नहीं। मैं कह रही थी कि उसका विवाह उनसे हो जाए तो अच्छा हो।'

'पागल तो नहीं हो शालिनी।'

'नहीं भावी जी, मैं बिलकुल ठीक कह रही हूँ। अब मुझसे इनका दुःख नहीं देखा जाता। इनकी खुशी ही में मेरी खुशी है।' शालिनी ने जिठानी की गोद में मुँह छिपा कर कहा। प्रयत्न करने पर भी उसके आँसू वह ही निकले।

'यह ठीक है, परन्तु एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं ? तुम्हारे होते छोटे भइया का विवाह उससे कैसे हो सकता है।"

'अससर आने पर दो तलवारें भी एक म्यान में रहती हैं।'

'नहीं शालिनी। वह चुड़ैल इस घर में कदापि पाँव नहीं रख सकती। छोटे भइया की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है जो ऐसी देवी को छोड़ कर उसके पीछे मारे फिरते हैं।' रेखा ने क्रोध से काँपते हुए कहा।

'ऐसा न कहिए भावी जी। वह मेरे स्वामी हैं। मेरे देवता हैं। उनको प्रसन्न रखना ही मेरा धर्म है। स्त्री का ईश्वर पति ही होता है।"

'ठीक कहती हो शालिनी। मैं जानती हूँ कि जब से तुम इस घर में आई हो, तुम्हें रोने के अतिरिक्त यहाँ और कुछ न मिल सका। निरन्तर तुम दुःख की अग्नि में अपनी आशाओं, उमङ्गों की आहुति चढ़ाती आ रही हो। छोटे भइया एक बार भी तुमसे सीधे मुँह न बोले। रो रही हो। रोओ खूब रोओ शालिनी। तुम्हारे भाग्य में ही यह है। हम लोगों से तुमने क्या पाया ? केवल दुःख अथाह दुःख। हम तुम्हें और कुछ न दे पाए।' रेखा शालिनी को अपने हृदय से चिपकाती हुई रो पड़ी।

'नहीं भावी जी, मैं तो आप लोगों की छत्रच्छाया में बहुत खुश हूँ। मुझे आप सी जिठानी और कहाँ मिल सकती थी जो मुझसे बहिन से भी अधिक प्यार करती। मुझे जो कुछ दुःख है भी, वह सुधा बहिन के आ जाने से दूर हो जायगा। तब मेरे स्वामी की प्रसन्नता मुझे मिल जाएगा। आप शीघ्र ही उसे लाने का प्रयत्न करिए।'

'आह ! अभी कम दुःख पाए हैं जो सौत का दुःख देखना और शेष है। कैसे इतना कुछ सहन कर पाओगी ?'

'वह मेरी सौत नहीं है। भावी जी, उसे मैं अपनी बड़ी बहिन बना कर रखूंगी, क्योंकि स्वामी के हृदय पर उसके प्रेम ने मेरे से प्रथम ही अधिकार जमाया था। वह मुझसे पहिले इस प्रेम की अधिकारिणी है। आप कुछ चिन्ता न करो।' शालिनी ने स्नेह से रेखा के गले में बाँहें डाल कर कहा। वह हँस रही थी अपनी जिठानी को भ्रम में डालने के लिए, किन्तु उसके हृदय में हाहाकार मचा हुआ था। उसके हृदय से बवंडर उठ रहा था। बड़े प्रयत्न से वह अपने आवेग को रोके हुए थी। रेखा उसके इस अपूर्व त्याग और धैर्य को देख कर रो पड़ी और सिसकती हुई बोली—'देवर ने त्याग की इस प्रतिमा की उपेक्षा करके उचित नहीं किया। आह ! कितना स्वार्थ-त्याग है।"

शालिनी ने हँसते हुए कहा—'आपको क्या हो रहा है जो रोए जा रही हो। यह स्वार्थ-त्याग नहीं है, बल्कि स्वार्थ-परता है। मैं स्वामी के चरणों की सेवा करने का लोभ संवरण नहीं कर सकती। उसके ही लिए यह सब है, क्योंकि इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। भावी जी, अपनी छोटी बहिन के इस सुख को न छीनों। दोनों का विवाह कर दो। मैं आपके पाँव छूती हूँ।"

'कैसे समझाऊँ कि इससे कुछ लाभ न होगा। फिर न जाने यह दोनों तुझे कितना दुःख दें।'

'नहीं ! मुझे कुछ दुःख नहीं देंगी। आप निश्चिन्त हो

कर दोनों के प्रेम को स्थायी कर दें। मुझे इससे अपार हर्ष होगा।' शालिनी ने विनय के स्वर में कहा।

'अच्छा यदि तेरा इतना अनुरोध है तो यह भी करूँगी ही। जिन हाथों से तुझे ब्याहा कर लाई हूँ उन्हीं हाथों से तेरे सुख को छीन कर उस सुधा को दे दूँगी।"

'नहीं आप यह सब न सोचें। सब ठीक होगा। आप शीघ्रतिशीघ्र यह कार्य करें।'

३

'लाइए, अब मिठाई खिलाइए। मैंने आपका विवाह सुधा से निश्चित कर दिया। ओह! बड़ी ही कठिनता से माताजी को मना पाई।' शालिनी ने हँसने की व्यर्थ चेष्टा करते हुए अपने पति से कहा।

'शालिनी तुम यह सब कर रही हो, पर क्या तुम्हें उससे डाह न होगी?' शौर्येंद्र ने जिज्ञासा के भाव से उसे देखते हुए पूछा।

'ऊँहूँ! मुझे डाह क्यों होने लगी। मुझे तो खुशी होगी कि मेरा सुख, दुःख बँटाने को मेरी एक बहिन आ जाएगी।' शालिनी ने आते हुए आँसुओं को छिपाने के अभिप्राय से मुँह फेरे हुए कहा।

'पर वह तुम्हारा एक मात्र अधिकार भी तो छीन लेगी, और क्या पता तुम्हें कष्ट भी दे।'

'नहीं नाथ, उसका आप पर मेरे से पहिले अधिकार है। यह कहिए कि मैंने ही उसका अधिकार छीनने की धृष्टता की है। मुझे आप दोनों को सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करते देख कर असीम हर्ष होगा, और मैं अ[illegible] सेवा करते हुए अपना शेष जीवन आनन्द पूर्वक [illegible] आप कुछ चिन्ता न करें।'

'शालिनी, तुम मनुष्य नहीं देवी हो। तुम आदर्श हो। तुम्हारा हृदय विशाल है। आज तुमने अपने नारी के सहनशील स्वभाव और त्याग का परिचय दे कर एक आदर्श उपस्थित कर दिया। मैं धन्य हूँ जो तुम्हारे समान उच्च विचारों वाली पत्नी पाई। यह सुधा कोई नहीं है। मैंने तो केवल तुम्हारी परीक्षा की थी। मैं तो केवल जानना चाहता था कि क्या वास्तव में ही नारी सहनशील और त्याग की प्रति मूर्ति है, सो आज मैंने उसका साक्षात् रूप देख लिया। मैं तुम्हें हृदय से प्यार करता रहा हूँ और इस हृदय पर तुम्हारे अतिरिक्त और किसी सुधा का अधिकार नहीं है। तुम्हीं सुधा हो। तुम्हीं इस हृदय राज्य की रानी हो। शालिनी, मैंने तुम्हें बहुत दुःख दिए हैं। क्या अपने अपराधी पति को क्षमा कर दोगी? शौर्येंद्र ने प्रेम से उसका हाथ दबाते हुए कहा।"

'हृदय देव' बस इसके आगे वह आनन्द के कारण कुछ न कह सकी। वह चकित होकर शौर्येंद्र की ओर देखती रह गई। हर्ष वेग के आधिक्य के कारण उसके मुँह से शब्द नहीं निकल पा रहे थे। उसके नेत्रों से प्रेमाश्रु की झड़ी लग गई और उसने शौर्येंद्र की गोदी में मुँह छिपा लिया।

इस पथ से आ जाना

लेखिका, श्री सावित्री देवी शर्मा

(भीम पलासी राग में)

मोहन इस पथ से आ जाना।
जब अर्ध निशा की बेला हो,
नभ में चन्द्रमा अकेला हो,
ओठों से वन्शी जगा जगा,
मुझको वह गीत सुना जाना।
मोहन इस पथ से आ जाना।

साड़ी के चार प्रकार

लेखिका, रानी शकुन्तला देवी

साड़ी ने संसार के फैशन में अपना महत्व पूर्ण स्थान बना लिया है। हिन्दुस्तान की स्त्री अपनी निराली साड़ी में दुनिया में जहाँ भी गई है उसका वहाँ आदर हुआ है। साड़ी का मेल संसार की सभी स्त्रियों की पोशाकों से मिल जाता है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू की बहनें दुनिया के प्रायः सभी फैशन के केन्द्रों में हो आई हैं। उनका कहना है कि उनकी साड़ी की पोशाक को सर्वत्र स्त्रियों ने पसन्द किया है। मैं स्वयं इङ्गलैंड और अमरीका हो आई हूँ। कितनी ही बड़ी दावतों और जलसों में मुझे शामिल होना पड़ा है। साड़ी ने सर्वत्र मेरा मान रक्खा है। विलायत की कितनी ही स्त्रियों ने मुझसे साड़ी पहनना सीखा। हिन्दुस्तान के पुरुषों ने योरप की पोशाक अपनाई पर हिन्दुस्तान की स्त्री ने अपनी पोशाक नहीं छोड़ी। इतना ही नहीं, उसने अपनी पोशाक दूसरों को भी दी। और एक ऐसा दिन आ सकता है जब भारत की स्त्री साड़ी के फैशन में सारे संसार का नेतृत्व करे।

कितनी ही योरुपीय स्त्रियों को और हिन्दुस्तान में रहने वाले कितने ही अँग्रेज अफसरों की बीवियों को मैंने साड़ी पहनना सिखाया है। परन्तु अपने इसी ज्ञान के बल पर मैं अपनी हिन्दुस्तान की बहनों की शिक्षिका बनने का दावा नहीं कर सकती। सम्भव है दीदी की पाठिकाएँ इस कला में मुझे भी बहुत कुछ सिखा सकें। मैं यह लेख प्रधान सम्पादिका के अनुरोध से लिख रही हूँ। मेरा ख्याल है कि जिन बहनों ने साड़ी को फैशन की वस्तु के रूप में अभी तक ग्रहण नहीं किया है, उन्हें इससे कुछ लाभ ज़रूर होगा।

अच्छा तो अब मैं अपने मुख्य विषय पर आती हूँ। प्यारी बहनो! यों तो साड़ी तुम्हारी रोज की पोशाक है।

प्रातः कालीन वायु सेवन के समय पहनने की साड़ी। रङ्ग हलका, साड़ी पर बुन्दे या फूल हों।

पर मैं चाहती हूँ तुम इसे फैशन के रूप में ग्रहण करो। साड़ी का फैशन के रूप में ग्रहण करने का मतलब यह है कि तुम इस तरह साड़ी पहनो कि उससे तुम्हारे शरीर की शोभा बढ़े, साथ ही वह उस अवसर के अनुरूप हो।

मान लो कि तुम्हें प्रातःकाल वायु सेवन के लिए जाना है। इस अवसर पर तुम्हें साड़ी इस तरह पहननी चाहिए कि तुम्हारे हाथ उसकी सँभाल से मुक्त हों। तुम आजादी के साथ अपने दोनों हाथों को संचालित कर सको। ऐसी साड़ी सिर्फ कन्धे पर पहनी जाय और अञ्चल सेफटी पिन से जंपर से बाँध दिया जाय। इस समय की साड़ी हलके रङ्ग
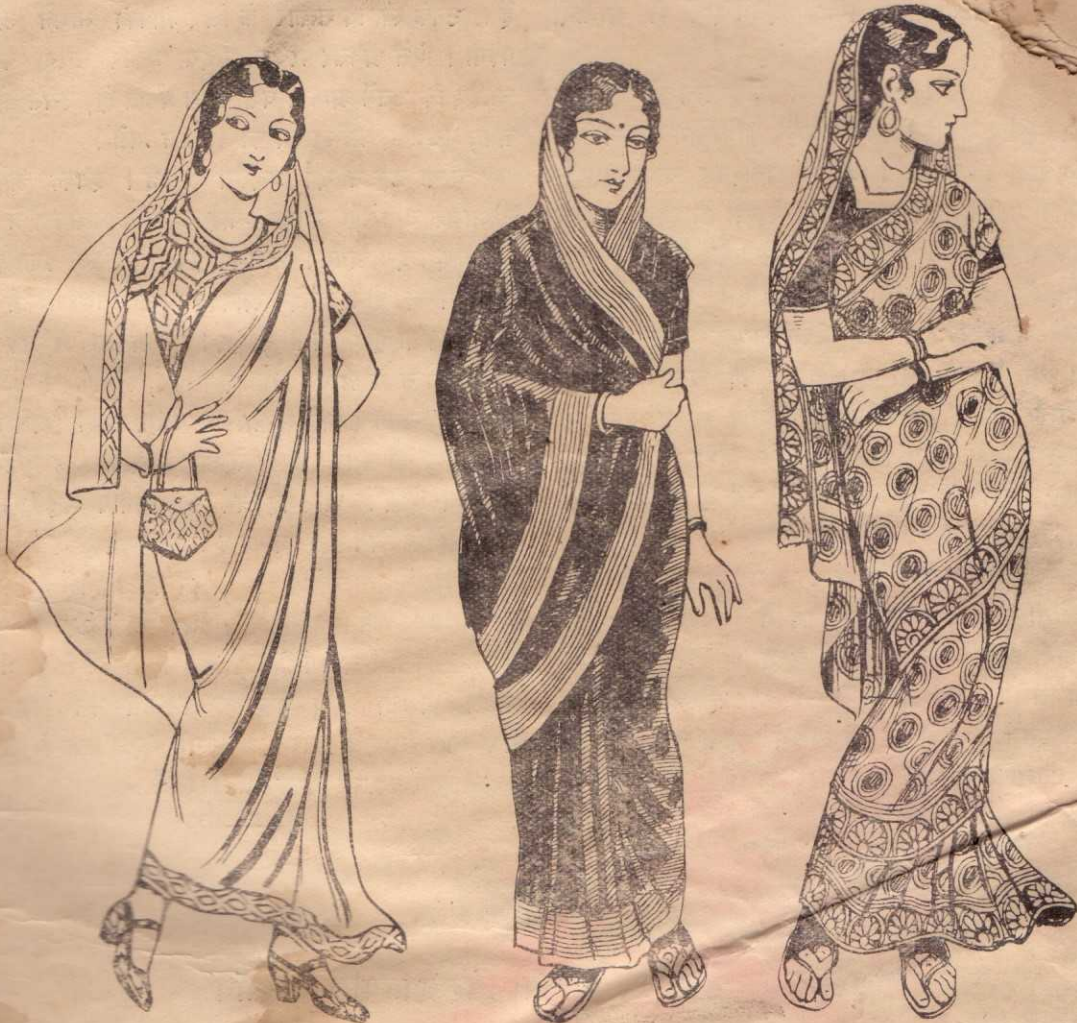
मार्केटिंग की साड़ी। किनारी, जूते बटुआ और जैकेट। सब में एक से फूल कढ़े हैं।

आतिथ्य सत्कार यानी जब घर में मेहमान आएँ उस समय पहनने की साड़ी। सौम्य रूप।

सौन्दर्य-प्रदर्शन के लिए साड़ी का पहनावा। यह साड़ी बदन से सटी हुई होना चाहिए।

की हो ताकि वह प्रातःकालीन रवि की मुलायम किरनों के अनुरूप प्रतीत हो। उस पर बुन्दे या फूल कढ़े हों तो क्या कहना! प्रातःकाल फूल खिलते हैं। अतएव फूलदार हलके रङ्ग की साड़ी तुम्हारे मन की ताज़गी बढ़ाने में पूर्ण सहायक हो सकती है। मैं जब भी प्रातःकाल टहलने निकलती हूँ, इसी तरह की साड़ी का चुनाव करती हूँ।

यों तो साड़ी पहनने के सैकड़ों ढङ्ग और अवसर निकाले जा सकते हैं परन्तु मैंने उन सबको चार वर्गों में बाँटा है। जो बहनें इन चार का बराबर ध्यान रक्खेंगी वे कभी उदास नहीं रह सकतीं।

पहला ढङ्ग प्रातः कालीन साड़ी का है—जो कि मैं ऊपर बता चुकी हूँ। गृहकार्य के समय भी साड़ी का यही

...सकता है क्योंकि इसमें हाथों को आजादी ...।

दूसरा मार्केटिङ्ग का है। मार्केटिङ्ग अँग्रेजी शब्द है और इङ्गलैंड की स्त्रियों में इस शब्द का प्रयोग उस घड़ी के लिए होता है जब स्त्री गृहस्थी की आवश्यक चीज़ें खरीदने बाज़ार जाती है। विलायत में घर गृहस्थी की चीज़ें खरीदने स्त्रियाँ ही जाती हैं। हिन्दुस्तान में परदा की प्रथा के कारण स्त्री इस सुख या दुख से वञ्चित रही है। पर बम्बई आदि शहरों में मार्केटिंग भी स्त्री जीवन का एक अङ्ग बन गया है। पढ़ी लिखी नारी के जीवन में यह अवसर आता ही रहता है इसलिए इस अवसर की पोशाक पर भी ध्यान देना ज़रूरी है। मार्केटिंग की पोशाक में योरुपियन तर्ज होना चाहिए। साड़ी का रङ्ग जहाँ तक हो एक ही हो और सपाट हो। रङ्ग गहरा या हलका समय के अनुसार होना चाहिए। बाज़ार में मित्रों और परिचितों से भी भेंट हो सकती है अतः एव ऐसी साड़ी के चुनाव और पहनने के ढङ्ग में सावधानी भी होनी चाहिए। जूता, किनारी बटुआ और जैकेट में साम्य होना चाहिए। ऐसी साड़ी सिर के ऊपर से रखी जा सकती है पर इसमें भी हाथों को पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

तीसरा ढङ्ग आतिथ्य-सत्कार का है। आपके घर में विशेष अवसरों पर बुलाने से परिचित इष्ट मित्र आ सकते हैं। उनके स्वागत सत्कार के लिए आपको सामने आना पड़ेगा। ऐसे अवसर पर साड़ी इस प्रकार धारण करनी चाहिए कि उसमें आपका वेश सौम्य प्रतीत हो, उससे कोमलता, प्रसन्नता, अभिवादन का आभास मिले।

चौथा ढङ्ग सौन्दर्य प्रदर्शन का है। इसका अवसर सामाजिक समारोहों, शादी ब्याह आदि की दावतों में आ सकता है। इस अवसर पर साड़ी किसी न किसी कला पूर्ण डिज़ाइन की होनी चाहिए और आपका उसका पहनने का ढङ्ग भी कला पूर्ण होना चाहिए। इस अवसर की साड़ी के लिए आप सबसे अधिक सावधानी करें, अधिक से अधिक खर्च करें, उसके पहनने में अधिक समय लगाएँ। उसे इस तरह पहनें कि उसके अन्दर से आपके शरीर का सुगठित सौंदर्य प्रदर्शित हो और वह स्वयं एक दर्शनीय वस्तु हो।

यहाँ जो चित्र दिए जा रहे हैं उन्हें ध्यान से देखें। सब बातें समझ में आ जायेंगी। ये चित्र कल्पित नहीं हैं। इन्हें मैंने भारतवर्ष की प्रतिष्ठित महारानियों के फोटोज़ से बनवाए हैं। वे नहीं चाहतीं कि उनका नाम प्रकट किया जाय इसीलिए असली फोटो न छपवा कर मैंने उनके ये रेखा चित्र तैयार कराए हैं। सम्भव है, इनमें किसी एक को आप पहचान जाएँ पर उसे अपने ही तक रक्खें।

पति-पत्नी

लेखक, महाकवि पण्डित अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

दोहा

समझ सका जो प्रेम पथ पथिकों का अधिकार।
वह पति पति है है जिसे पत्नी सच्चा प्यार ॥१॥
बहें विवाहित हृदय में पावन प्रेम प्रवाह।
चित में संचित नित रहे हित उचित उत्साह ॥२॥
वनिता मुख पर दृग रहे कभी उसे दुख दे न।
कर वैदिक विधि से वरण वर वरता भूले न ॥३॥
ललना लोचन में बसे कर उर पर अधिकार।
पले प्यार की गोद में बने गले का हार ॥४॥
सदा विपुल पुलकित रहे कर अरुचिर रुचि अन्त।
कभी अकान्त बने नहीं कान्त कहा कर कन्त ॥५॥
क्यों न बनायेगी उसे वह स्वकण्ठ का हार।
जिस पत्नी को है अधिक पातिव्रत से प्यार ॥६॥
देवी उसको मानते हैं महि के मतिमान।
जो प्रियतम को मानती है देवता समान ॥७॥
है वह शुचि रुचि सहचरी है वह परम उदार।
जी से प्यारा है जिसे प्रिय पति का परिवार ॥८॥
सुप्रकृति सवचन सुमति रति सुकृति सुगति सुविचार।
हैं कुलीन कामिनी के जीवन के आधार ॥९॥
जीवन धन पर जो सती सकी स्वजीवन वार।
है असार संसार में उसका जीवन सार ॥१०॥

कनु

लेखक, श्री नवल

जिस दिन कनु पहिले-पहल स्कूल जाने वाला था, उस दिन माँ की खुशी का ओर छोर न था। उसने कनु को नये-नये कपड़ों से सजाया। सिर में तेल डाला, फिर माँग निकाली। पैरों में मोजे-जूते पहिनाये। बड़ा सुन्दर दीखने लगा वह!

सारा दिन कनु माँ से अजनबी प्रश्न पूछता रहा और माँ भी उसे उत्तरों से समाधान करती रहीं। साथ में ताकीद भी करती रहीं—बेटा, स्कूल में किसी से झगड़ना नहीं। माँ को उसके नटखटपन से बड़ा भय था। जब कनु स्कूल जाने लगा, तो माँ एक बार फिर दोहराई—"बेटा, किसी से लड़ाई फिसाद न करना। गुरू जी जो कुछ कहें उसे ध्यान पूर्वक सुनना और करना। शाम को सीधा घर आइयो। अच्छा जा। "माँ ने एक बार विह्वल हो उसे चूम लिया।

कनु ने समझदार की नाई सिर हिला दिया और अपने दोस्तों के सङ्ग स्कूल को रवाना हो गया। माँ उसके दूसरे साथियों को भी हिदायत देते न भूली—"भैया, देखना! मेरे बच्चे को कोई न सताए। शाम को अपने साथ वापिस घर ले आना।"

माँ दरवाजे पर खड़ी देखती रही—कनु चला जा रहा था। वह लम्बे डग भरे जा रहा था। उसके चाल में जैसे योद्धा की उमंग थी, जैसे कोई देश जीतने जा रहा हो। माँ प्रसन्न थी, पर दूसरे क्षण वह अपने को जब्त न कर सकी। उसकी सारी प्रसन्नता आसुओं में फूट पड़ी। कनु आज चन्द घण्टे के लिये बिछुड़ रहा था; पर माँ के लिये यह असह्य था। अब तक वह उसे अपने अन्तर क वस्तु जान कर छिपाये रही ताकि वह किसी के आखों में न गड़ जाय। पर आज उसे कनु को चन्द घण्टे के लिये दूर करना ही पड़ा। करती भी क्यों नहीं, जब माँ होने के नाते वह यह चाहती हैं कि बच्चा पढ़े-लिखे। नाम व शोहरत कमावे। उसका भविष्य सुन्दर हो। सारी दुनिया में उसका नाम रोशन हो।

जब कनु दृष्टि से ओझल हो गया, तब माँ घायल की भाँति लड़खड़ाते हुए भीतर चली आयी। घर में आयी, और काम में लग गई। अपने को भुलाना था, पर न हो सका। काम में मन बैठता ही न था। वह चाहती थीं कि कनु को ख्याल से दूर कर दें। यह सोच कर वह जोरों से काम में भिल जाती थीं, पर उतनी ही जोर से कनु की याद उसे छेड़ती थी। उसे ऐसा लगा जैसे उसके भीतर की माँ कनु के पीछे चली गई है और उसका शरीर यों ही निश्चल यहाँ पड़ा रह गया है। सहसा उसे लगा कि पीछे से कोई उसका आँचल खींच रहा है। कोई पीछे से कह रहा है—"अरी माँ, तू किसमें भूली है। मैं तेरा आँचल कब से खींच रहा हूँ। अरी तू मुझे घूम कर देखती क्यों नहीं। मैं तेरा कनु हूँ। मेरी प्यारी याँ, मुझे देख। मुझे पालो और मेरा चुम्बन कर। मैं ज्यादा देर उपेक्षित नहीं रह सकता। मुझे रोना आता है······हाँ।" माँ सहसा चौंकी। घूम कर पीछे देखा—कोई नहीं! दिवालें अट्ठहास कर उठीं। मानों कहती हों—"ओ दिवानी, वह यहाँ नहीं है—नहीं है। ओ भावमयी, यह तो स्वप्न था, कोरा स्वप्न था।" फिर मानो गम्भीर स्वर में कहने लगीं—"ओ स्नेहमयी, तू हृदय कड़ा कर। ओ भावमयी, तू भावों में न बह जा। हमसी बन जा, निश्चल, बिलकुल निस्पन्द।" अन्त में मा थक कर एक ओर बैठ गई। घड़ी को देखा, पर आज वह बड़ी सुस्त लगी।······

चार बजे!

कनु के आने में अभी आधे घण्टे की देर थी। पर माँ में सहनशीलता कहाँ? वह उसी क्षण दरवाजे पर चली आयीं। दृष्टि दूर तक दौड़ाई पर कनु नजर नहीं आ रहा था। आखें तरसाई हुई थीं। सोच रही थी—कब मेरा कनु आवे और उसका भोला मुखड़ा देखूँ और भूल जाऊँ अपना मिलन वियोग।

...ा पीछे से नौकर ने आवाज दी—"माँ जी, रसोई ...में बिल्ली दूध पीये जा रही है। गंज खुला पड़ा है।"

शायद माँ ने सुना नहीं। वह वैसी ही वहाँ खड़ी रही, बोली नहीं।

"माँ जी, बिल्ली दूध पीये........"

"तू भगा नहीं सकता जो मुझे कहने चला है।"—माँ ने घुड़क दिया।

"पर माँ जी, कनु भैया के लिये खाना रखा है सो।"

माँ को अपनी गलती जना आई। पर अब दरवाजे से कैसे हटा जा सकता है? अगर इसी बीच कनु आ जाय और अपनी प्यारी माँ को न देखे तो.....? इसलिये धीरे से कह दिया—"पी जाने दो। शाम को वैसे ही ग्वालिन आयेगी, एक पाव ज्यादा दूध ले लेंगे।"

नौकर ने सुना तो आश्चर्य से भौचक्का रह गया। आज माँ ने दूध के प्रति इतनी लापरही क्यों दर्शाई?

माँ ने देखा—कनु अपने साथियों के संग बातचीत करता हुआ आ रहा था। माँ का चेहरा खिल उठा। उसने अपने हाथ बढ़ा दिये। कनु दौड़ कर माँ के पैरों से लिपट गया। माँ ने झट से उसे पा लिया और प्रेम पूर्ण चुम्बन किया। माँ-बेटे हँस रहे थे एक दूसरे को देख कर।

भीतर ले जा कर माँ ने कनु के जूते के फीते खोलते हुए पूछा—"बेटा, आज तूने क्या-क्या सीखा?"

तब कनु ने बहादुरी के स्वर में कहा—"माँ मैंने आज दो अक्षर और दस तक गिनती सीखी।"

"ओह, इतने ज्यादे!"—माँ ने आश्चर्य से आखें फैला दी। फिर बोलीं—"तू तो बड़ा होशियार हो गया है रे। मेरा लाड़ला बेटा खूब पढ़ेगा और अपनी माँ को सुख देगा, हाँ।"

माँ ने तब कनु की बलैया ली। और कहा—"अच्छा चल, अब खा ले।"

फिर माँ-बेटे दोनों साथ खाये।

× × ×

स्कूल में पहिला दिन कनु के लिये बड़ा सुख कर बीता। गुरू जी ने नये चेले से कहा—"यहाँ आओ।"

कनु सहमता हुआ कुछ आगे बढ़ आया।

तब मीठे स्वर में गुरू जी ने पूछा—"बेटा, तेरा नाम क्या है?"

"कनु।"

"बड़ा प्यारा नाम है। पढ़ने आये हो, पढ़ोगे?"

"जी।"

"बड़ी अच्छी बात है। अच्छे लड़के पढ़ा करते हैं। पढ़ कर बेरिस्टर बनते हैं। तुम भी बनना।"—गुरू जी बोले।

"लाओ तो तुम्हारी स्लेट।"

कनु ने स्लेट बढ़ा दी। गुरू जी ने भीतर कुछ लिख दिया और बोले—"इसे घोंटो....।"

कनु तब सारी उमंग लिये लिखने में मग्न हो गया।...

पर वह तो पहिला दिन था। पर ज्यों-ज्यों समय बीतने लगा, गुरू जी खुलने लगे। बाल-मनोविज्ञान के गुरू जी अनुभवी हैं या नहीं, सो नहीं मालूम। पर उनका कहना है कि बालक और जानवर एक समान होते हैं। जब तक ताड़ना नहीं दी जाती, सीधे नहीं चलते।

बेचारा कनु रोज पहाड़े याद करके स्कूल जाता है, पर जब वह गुरु जी की सड़सड़ाती बेंत और तीखा स्वर सुनता है तो उसके राम कूच कर जाते हैं। हृदय में घबराहट फैल जाती है। बेचारा बोलने में गलती कर बैठता है। इस पर गुरू जी गुस्सा उतारते हुए एक दो बेंत रसीद देते कर हैं। और ऊपर से 'कामचोर', 'बे परवाह', की उपाधियों से विभूषित करते हैं।

कनु बिचारा सब कुछ सुन लेता है, सह लेता है। वह कैसे सफाई दे कि वह पढ़ता है। वह न 'कामचोर' है, न 'बे परवाह', वह पढ़ता है।

शाम को माँ दरवाजे पर खड़ी कनु की सतृष्ण नेत्रो के बाट जोहती है। सोचती है कि अभी मेरा कनु हँसते हुए आयगा और मेरी गोदी में चढ़ने के लिये मचलेगा। तब वह उसे पा लेगी और प्रेम पूर्ण चुम्बन करेगी। पर जब वह मलीन मुख लिये आता है और गोदी में चढ़ने के लिये न मचलता है, न झगड़ता है; तब माँ का हृदय दुख और आवेग से भर-भर आता है। बेचारी कनु को हँसाने का प्रयत्न करती है, पर अब न वह मीठी मुस्कान रही, न वह दिलचोर हँसी। चेहरा गम्भीर और मलीन पड़ गया है।

माँ को अब वह बहादुरी के साथ नहीं कहता कि मैंने दो अक्षर और दस तक गिनती सीखी। रात को कमरे के एक कोने में बत्ती के सम्मुख जब कनु को स्लेट पर गिनती अथवा पाठ लिखते समय दूध अथवा खाने के लिये बुलाती है तो वह झल्ला उठता है। राड़ मचाते हुए कहता है—"मैं नहीं खाता जा।" माँ का हृदय तब आवेग से उफन आता है। आखों से आसूँ ढरकने लगते हैं।

वह माँ है माँ। क्या माँ हो कर नारी सीमित हो जाती है? इसके अलावा उसका कोई कार्य नहीं? तब क्या इसके यह माने है कि जो खोकर गँवा कर उसने पाया है उसे अपने अंक में न सकेल सके? जिस स्नेहमयी वस्तु को उसने अपना सारा रक्त निचोड़ कर बनाया है, जिस पर अपना सारा स्नेह उड़ेला है, उससे कुछ, किंचित भी पाने की आशा न करे? वह आँसू निकाले ठगी-ठगी सी रह जाय। वह माँ तो बने, पर उनका मातृत्व जैसे रोता रहे, तड़पता रहे। वह तो केवल बच्चे के प्यार की भूखी है। अगर वह माँ होने के नाते उस प्यार को न उपलब्ध कर सकी, तो उसके समान कौन अभागिन है? यह तो मातृत्व स्नेह की परम उपेक्षा गिनी जायगी।

कभी-कभी तो वह एकाएक खीज उठती। कहती, मेरा बस चले तो सारे स्कूलों में सजा देना बन्द करा दूँ।

× × ×

वर्षा ऋतु के दिन थे। लोग अकसर इस काल बीमार पड़ जाया करते हैं। उस दिन कनु को ज्वर आ गया। बड़ी मुश्किल से बाबू जी के अनुरोध करने पर वह स्कूल न गया। दूसरे दिन यद्यपि उसकी तबीयत ठीक नहीं हो पायी थी, वह माँ को बिना जताये चुपके से स्कूल चल दिया।

आदतानुसार स्कूल में गुरु जी ने पूछा—"क्यों रे कनु, कल स्कूल क्यों नहीं आया।"

"गुरू जी, मैं बीमार था इसलिये।"—कनु ने छोटे में उत्तर दे दिया।

"घर में पड़े-पड़े कुछ याद किया है या नहीं?" गुरू जी ने बेंत सनसनाते हुए पूछा।

"जी......"

"अच्छा बोल तो पौन का पहाड़ा?"

कनु बोलने लगा, पर बीच में वह कुछ गड़बड़ा बैठा। इस पर गुरू जी ने एक बेंत जमा दी और कहा—यही याद है। कनु तब ठीक से पहाड़ा बोल गया। उसकी वाणी में कम्पन था। गुरू जी कहते रहे—"तुम लोगों को जब तक मार नहीं पड़ती, तब तक अक्ल ठिकाने नहीं आती। अच्छा, सवा का पहाड़ा अब बोल तो?"

कनु क्या जवाब दे? उसे तो याद न था। फिर क्या था? गुरू जी ने दो बेंत दी कनु के हथेली पर। फिर कहा—"याद नहीं है। कामचोर कहीं का! घर में पढ़ना-बढ़ना कुछ नहीं है, खेलना है सारा दिन। बेपरवाह! पढ़ो यहाँ खड़े-खड़े।"

कनु तब सवा का पहाड़ा खड़े-खड़े याद करने लगा और कमीज के छोर से आँसू भी पोछे जा रहा था, साथ ही साथ।......

शाम को छुट्टी हुई। रिमझिम रिमझिम मेंह बरस रहा था। कनु घर लौटा, पर बीच में पानी खूब जोर से बरस पड़ा और वह घर भींगते हुए आया।

माँ ने देखा, तो कहा—"बेटा, भीगते हुए क्यों आया? जरा ठहर के आ जाना था। कल बुखार आ गया था और आज कहीं आ जाय तो?"

कनु कुछ बोला नहीं।

माँ भीतर गई और कनु के कपड़े बाहर ले आयी। भीगे कपड़े उतारे। हाथ छुआ तो चिल्ला उठी—"हाय मैया री, तू तो बुखार से भरा है।" माँ ने कनु की आखों को देखा—वे लाल थीं। माँ ने झटपट कपड़े पहिनाये, खटिया बिछाया और कनु को सुलाकर ऊपर से कम्बल ओढ़ा दिया।

माँ रो रही थीं। हाय, कनु कितना बेपरवाह हो गया है। उसे कुछ अपने शरीर का भी मान नहीं है। कहीं उसे कुछ हो जाय तो माँ के लिये खाना-पीना हराम हो जायगा।

× × ×

दूसरे दिन कनु स्कूल न गया। गुरू जी ने उसके पड़ोसी कान्ति लाल से पूछा—"कनु, क्यों नहीं आया?"

"वह बीमार है।"

इतने में एक लड़का बोल उठा—"हाँ गुरू जी, कल भी वह बीमार था। दोपहर को उसे उल्टी हो गई थी और

...में थी। हम लोगों ने उसे घर जाने के लिये कहा, पर वह न गया।"

"एँ, तो तुम लोगों ने मुझे क्यों न कहा।"

लड़का चुप था।......

तीसरे दिन भी कनु न गया। पता लगाने पर मालूम हुआ कि उसे सन्निपात हो गया है। तब गुरू जी की इच्छा हुई कि उसे देख आवें।

× × ×

शाम का वक्त था। घर में एक ओर दिया टिमटिमा रहा था। कनु ज्वर में भरा खटिये पर आखें मूँदे पड़ा हुआ था। माँ सिरहाने पर बैठी सिर दाब रही थी। पिता जी आराम कुर्सी पर लेटे कोई अखबार पढ़ने में मशगूल थे।

सहसा किसी ने दरवाजा खटखटाया।

"कौन?"—कनु के पिता अखबार छोड़ कर दरवाजे पर चले आये। किवाड़ खोला तो कनु के गुरू जी को खड़े पाया।

"नमस्ते मास्टर साहब! कहिये कैसे आना हुआ?"

"कनु को देखने आया हूँ। वह बीमार है न?"

"जी हाँ, आइये मेरे साथ।"

कनु आखें मूदे हुए पड़ा था। सहसा उसने सुना कि पिता जी माँ से कह रहे हैं कि मास्टर साहब कनु को देखने आये हैं। वह चीख कर बोला—"कौन?" उसके चेहरे पर से हवाइयाँ उड़ने लगीं, जैसे खूब डर गया हो।

माँ झट से एक ओर खड़ी हो गईं। सिर आँचल नीचे कर लिया। पिता ने कनु के सिर पर हाथ फेरते हुए मीठे स्वर में कहा—"बेटा कनु! देख, तेरे गुरू जी तुझे देखने आये हैं। उन्हें प्रणाम कर।"

तब कनु ने क्षीण स्वर में कहा—"प्रणाम गुरू जी।"

गुरू जी ने तब आशीर्वाद दिया। वह आगे बढ़ आये। उनका चेहरा दुखित था। पर कनु में डर समा गया था। वह और डरा शायद स्कूल के दृश्य की याद से। सहसा वह काँप उठा। सिसकियाँ भरते हुए कहने लगा—"गुरू जी मैंने सवा का पहाड़ा याद नहीं किया है। मुझे न मारेंगे। मैं बीमार हूँ। मैं सवा का पहाड़ा......"कनु की आँखों से आसू ढरकने लगे। चेहरे पर से करुणा टपकने लगी।

"नहीं बेटा, मैं तुझे न मारूगा। तू बीमार है।"

गुरू जी ने तब आगे बढ़ कर कनु की नाड़ी छुई। देखा, नाड़ी बहुत मन्द पड़ गयी थी। वह बेहोश हो गया था।

गीत

लेखिका, श्रीमती तारा पांडे

उठो अब जागो री सजनी!
भोर भई खग गाना गाते,
बीत गई रजनी!
पूर्व गगन में ऊषा आली,
भरती है जीवन की लाली,
किरणों के मोहक स्पर्श से
पुलकित है अवनी!
मुग्ध पवन डोली मतवाली,
हँसती, खिलती डाली-डाली,
इस उत्सव की बेला में तू
मंगल गा सजनी!
मत उलझा प्राणों की जाली,
भरी आज फूलों से थाली,
आ, दिन कर को अर्घ्यदान दे,
विगत भई रजनी!

पुन्ना

लेखक, बाबू वृन्दावन लाल वर्मा एडवोकेट

[१]

पुन्ना परिश्रम तो काफी करता था, परन्तु सोता भी काफी था और खाता भी काफी था। रामपरख केवलपुर के जिर्मींदार थे, मालदार थे। बाल-बच्चे वाले थे। इसलिये अपने नौकर पुन्ना चमार को खिलाने-पिलाने में कसर नहीं लगाते थे, परन्तु उनको उसका सोना बहुत अखरता था। गाली-गलौज ने पहिले कुछ असर किया, कुछ दिन पीछे यह शस्त्र मोथरा पड़ गया। तब मारपीट की नौबत आई। इस शस्त्र के प्रहार के भय ने कुछ समय तक अपना प्रभाव जारी रक्खा, परन्तु ज्यों-ज्यों इसका प्रयोग बढ़ता गया त्यों-त्यों उसका भय और साक्षात् प्रभाव घटता गया। पुन्ना के पास केवलपुर में कुछ जमीन थी, घर था और घर में विकट जिह्वा वाली गृहिणी थी। मारपीट की मात्रा बढ़ जाने पर भी पुन्ना, इसीलिये, केवलपुर—मोह का त्याग न कर सका। सोचता था, "बाहर ही कौन सा गुड़ मिलेगा?"

असाढ़ के दिन थे। पानी बरसा। खेतों के जोतने बखरने की गाँव में तैयारी हो गई। पुन्ना भी अपने काम पर भिल पड़ा। काम चालू करके रामपरख पड़ोस के एक शहर में गए और काफी संख्या में कुछ पके कुछ गदरे दसहरी आम खरीद लाए।

पुन्ना पिटते पिटते काफी ढीठ हो गया था। गाड़ी पर से ही आमों की उसने सुगन्धि ली और राम परख से पूछा, "यह काहे की गन्ध है?" राम परख ने बिना त्योरी बदले उत्तर दिया, "तुम्हारे सिर की।"

"मेरा सिर ऐसा बसाने लगे, तो मैं इतना पिटूँ ही क्यों?" पुन्ना ने हँस कर उत्तर दिया। रामपरख ने भी बिना किसी ग्लानि के हँसते हुये ही कहा, "जैसे जानता ही न हो। ऐसा लुच्चा है। इनमें से जो पके हैं उनको छाँट कर एक टोकनी में रख देना। आज खायँगे। जो गदरे हैं उनको भूसे में रख देना। जैसे जैसे पकते जायँगे तैसे तैसे निकालते जायँगे।"

पुन्ना ने आमों की गठरी उठा ली। इतने में रामपरख का १३, १४ वर्ष का लड़का काशी आया। उसने दसहरी आम खाया था। वह स्वाद और सुगन्धि दोनों से परिचित था। उसी समय खाने का हठ करने लगा। रामपरख ने तत्काल खाने के दो एक अवगुण काशी को समझाए। भीतर पहुँचते पहुँचते उसकी माँ ने भी अपने पति का समर्थन किया, परन्तु इकलौते लड़के का हठ चल गया, युक्ति या अयुक्ति असमर्थ रही।

पुन्ना छाँट छाँट कर पके हुये आम एक टोकनी में रखने लगा और काशी मनमाना खाने लगा। रामपरख और उनकी पत्नी की आयुर्वेदिक दलीलें समाप्त हो चुकी थीं, इसलिये वे किसी काम में लग गए। पुन्ना और काशी में बातचीत होने लगी।

पुन्ना—"तुम तो भैया बड़े सपाटे से खाते चले जा रहे हो। नुकसान करेगा।"

काशी—"बहुत ही मीठा आम है। यह नुकसान नहीं कर सकता।"

पुन्ना—"हाँ, बास तो इसमें ऐसी ही है, परन्तु क्या बिलकुल गुड़ जैसा है?"

काशी—"अबे उल्लू, गुड़ इसके सामने क्या चीज है। दादा कहते हैं कि दुनिया भर में ऐसा बढ़िया आम नहीं होता।" पुन्ना कुछ सोचने लगा। काशी आम खाता गया।

पुन्ना ने प्रश्न किया, "अपने गाँव के आम से भी बढ़ कर अच्छा है?"

काशी ने हँसते हँसते उत्तर दिया, "दसहरी आम को खाने के बाद फिर गाँव के आम को तो देखने की इच्छा नहीं होती।"

पुन्ना ने कहा, "हाँ इसमें गूदा तो बहुत है।" काशी ने सतर्क हो कर प्रस्ताव किया, "हम तुम्हें थोड़ा सा देते हैं खा कर देखो। फिर इसके सामने कोई चीज अच्छी नहीं लगेगी।" काशी ने एक छोटा सा टुकड़ा काट कर

...ा और बढ़ाया। पुन्ना ने सतृष्ण नेत्रों से देखा और प्रबलता के साथ कहा, "यह क्या ? मैं क्या ऐसे खा सकता हूँ ? मुझको तो रोटियाँ मिलती जायँ। यही बहुत है।" काशी ने वह टुकड़ा अपने मुँह में रख लिया।

[२]

परम्परा के अनुसार रात को गाँव के देवतानी चबूतरे पर नावतों सयानों की बैठक हुई। खूब सोने वाले पुन्ना को इस बैठक के समाचार के कारण नींद नहीं आई। चबूतरे पर जा पहुँचा। ढोल और झाँझ बज रही थी। जोर के साथ गायन हो रहा था। अँगारों पर घी का होम कभी कभी कर दिया जाता था। ठंडी हवा चल रही थी। चबूतरे पर बैठे हुए लगभग सभी के मन फड़क रहे थे, कुछ मतवाले से। यकायक दो सिर हिल उठे और उनके मुखों से निकल पड़ा, 'ओ, ओ, ओ, ओ।' शब्द जारी रहे और सिरों का हिलना भी। इतने में एक व्यक्ति ने हाथ जोड़ कर कहा, 'महाराज मेरी भैंस कई दिन से बीमार है। बहुत उपाय किये। कई दवाइयाँ दीं, पर कोई फल नहीं हुआ। बहुत हैरान हूँ। बरदान दीजिये।' उन दो हिलते हुये व्यक्तियों में से एक ने धीरे धीरे परन्तु हुङ्कार के विराम के साथ उत्तर दिया, 'तुमने बहुत उपाय किये हैं, इसीलिये तुम्हारी भैंस अच्छी नहीं हुई। तुम्हारी भैंस ने गड़रिया की ईख चर ली है और तुमने उसकी रोक थाम नहीं की, इसी कारण देवता को क्रोध आ गया है। और दवाई करने से भैंस मर जायगी। बिलकुल सच मानो।'

भैंस वाले ने गिड़गिड़ा कर कहा, 'महाराज, महाराज, भैंस मर गई तो मैं मर जाऊँगा। मेरी रक्षा करो। आगे मैं कभी भैंस को उजाड़ नहीं करने दूँगा।'

नावते ने 'हुँ, हुँ और 'ओ' ओ, का उचार करते हुये हवन की थोड़ी सी भस्म लेकर भैंस वाले की ओर हाथ बढ़ा कर कहा, 'ले। भैंस अच्छी हो जायगी। देवता को कल एक बकरा चढ़ा देना। दो नारियल और बताशे भी।'

भैंस वाला प्रतिवाद करते हुये विनय के साथ बोला, "महाराज इतना पैसा मेरे पास नहीं है कि बकरा खरीद सकूँ।"

'जा साले, अभागे।' दूसरे सयाने ने सिर हिलाते-हिलाते और 'हुँ, हुँ उचार करते हुये कहा, 'इतनी पूजा नहीं चढ़ावेगा तो भैंस तो बचेगी नहीं, कुछ और भी अनर्थ होगा।' भैंस वाले ने काँप कर इस आज्ञा को सुना और बकरा इत्यादि चढ़ाने के आदेश को शिरोधार्य किया।

इसके उपरान्त फिर ढोल और झाँझ बजे और जोर से कंठ ध्वनि हुई। वे दो सिर तो हिल ही रहे थे। अबकी बार एक तीसरे व्यक्ति के शरीर में पहिले फुरारू आई और फिर वह चबूतरे पर लोटने लगा। श्रोता और गायक इधर उधर हट गये, किन्तु वे दोनों नावते अपने स्थानों पर बैठे रहे। परन्तु उनके सिरों का हिलना और हुँकार बन्द हो गई। चबूतरे पर देवता-वशीभूत इस लोटने वाले को उपस्थित व्यक्ति ध्यान के साथ देखने लगे। वह बहुत जोर के साथ परम्परा स्वीकृत शब्दों का उचार कर रहा था। और बड़े जोर के साथ चिल्ला रहा था।

एक नावते ने पूछा, "आप कौन है ?"

कोई उत्तर नहीं। परन्तु कठोर कंठ-ध्वनि और उसकी देह के समग्र अंगों का बेहद आहुञ्चन और प्रसारण जारी रहा।

ऐसे उत्पात के साथ किसी के सिर उस गाँव में कोई भी देवता कभी नहीं आया था। प्रश्नों और मन्तव्यों की झड़ी लग गई। परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। काफी समय उपरान्त वह व्यक्ति धीरे धीरे शान्त होने लगा। अन्त में बहुत सा फेन मुँह से उचटा कर वह सो गया।

यह व्यक्ति पुन्ना चमार था।

[३]

दसहरी आम को ज्यादा देर तक भूसे में रख कर पकाने की जरूरत नहीं पड़ी। दूसरे ही दिन जैसे ही सन्ध्या समय पुन्ना खेतों पर से लौटा उसको आम याद आए। एक अँधेरी कोठरी में जानवरों के लिये भूसा भरा हुआ था। उसी के एक कोने में एक दिन पहिले पुन्ना ने गदरे आम गाड़ दिये थे। कोठरी में घुसते ही पुन्ना को अनुकूल महक ने मग्न कर दिया। समझ गया कि पक गए। निकाल कर एक आम सूँघा। गुड़ इसके सामने झख मारता है, गाँव का आम तो दसहरी का पानी भरने लायक भी नहीं। तब उसमें ऐसा बात है ? कौन सी मधुरता का रस है ? कल काशी एक टुकड़ा दे रहा था। आँखें तरस कर ही रह गई

थी, और उस लघु खण्ड से इतने बड़े पेट का कौन सा कोना तृप्त होता? पुन्ना ने सोचा कि एक आम कम हो जाने से बात पकड़ी नहीं जा सकेगी। इसलिये नाखून से छील कर तुरन्त एक आम खा गया। जैसे एक वैसे ही दो। दूसरा भी चट कर गया। दो आम खा जाने के बाद पुन्ना को चिन्ता हुई, 'अब शायद पकड़ा जाऊँ।' परन्तु उसने निश्चय करने में विलम्ब नहीं किया—'जीभ अभी दसहरी के सुस्वाद से भीगी हुई थी,—'आम तो चूहे भी उड़ा ले जा सकते हैं।' इस कल्पना ने पुन्ना को सम्पूर्ण विघ्नबाधाओं से पार कर दिया।

तब पुन्ना ने फुर्ती के साथ, व्यग्रता के साथ, आमों की गिनती कम करनी शुरू कर दी, और थोड़ी देर में गिनने योग्य वहाँ कुछ रहा ही नहीं। सावधानी के साथ उसने भूसे के बड़े ढेर में गुठलियों को गाड़ दिया। परन्तु वह छिलकों का हटाना भूल गया।

हाथ मुँह धो कर पुन्ना अपने काम में लग गया। ब्यालू के समय रामपरख आमों की आशा बाँधे चौके में जा बैठे। खाना खाते खाते पुन्ना से कहा, 'देख आ रे आम पक गए या नहीं।'

पुन्ना 'हाँ' कह कर चला गया। थोड़ी देर में लौट कर उसने उत्तर दिया, 'आम तो वहाँ है ही नहीं।'

'एक भी नहीं?' आश्चर्य के साथ राम परख ने प्रश्न किया।

'एक भी नहीं।' खेद के साथ पुन्ना ने जवाब दिया।

रामपरख ने कहा, 'देखूँ।' और वह थाली वैसे ही छोड़ कर लालटेन हाथ में लिये हुये भूसे वाली कोठरी में गए। जिस स्थान पर पकने के लिये आम रक्खे बतलाए गए थे। वहाँ का एक तिनका लौटा पल्टा परन्तु मिला कुछ भी नहीं। राम परख बहुत त्रस्त और क्षुब्ध थे। इतने में काशी भी आ गया।

लड़का बोला, 'दादा भूसे में और जगह हाथ डाल कर ढुढ़वाइये। पुन्ना शायद भूल गया है।' यह भी किया गया तो भी आम नहीं मिले।

अब रामपरख ने स्वयं गहरे गहरे हाथ डालना आरम्भ किया। एक गुठली हाथ में आई। गूदा बिलकुल साफ। केवल भूसा लिपटा हुआ। राम परख ने बारीकी के साथ निरीक्षण करके कहा, यह तो चूहे की खाई हुई न[illegible] पड़ती। काशी तुमने तो नहीं कहीं छिप लुक कर यह सब किया है?'

काशी ने सरोष उत्तर दिया, 'वाह दादा, मैं क्यों करता? मुझको तो यों ही चाहे जितने खाने को मिल जाते।'

लड़के को इस आरोप पर चोट भी लगी, और उसने तिलमिला कर इधर उधर देखा। उसकी आँख एक कोने में सफेदी मिली हुई कुछ बिखरी हुई हरियाली पर पड़ी। दौड़ कर वह उसी स्थान पर पहुँचा। भूसे में लिपटे हुये छिलकों का ढेर था। काशी ने चटपट छिलकों को अञ्जलि में भर लिया और दौड़ कर अपने पिता को दिखलाया। बोला, 'दादा, चूहों ने छिलके उस कोने में इकट्ठे लगा कर रक्खे हैं।'

रामपरख का क्रोध उभड़ा। पुन्ना से पूछा, 'क्यों बे, ये किसने खाए हैं?'

'मैं क्या जानूँ?' पुन्ना ने उत्तर दिया।

रामपरख के क्रोध ने और घनत्व पाया। बोले, 'मैं क्या जानूँ! साले, हरामजादे खुद खा गया और कहता है कि चूहे उड़ा ले गए! बतला सच सच नहीं तो आज पेट फाड़ डालूँगा।'

पुन्ना ने अचलता के साथ, परन्तु रीती दृष्टि से कहा, 'क्या मालूम किसने खाए।'

इसके बाद जो कुछ हुआ वह ब्योरे के साथ लिखने योग्य नहीं है। इतना ही बतला देना काफी होगा कि राम परख ने पुन्ना को कोठरी से बाहर निकाल कर घसीट घसीट कर इतना मारा कि वह अचेत हो गया। वह और भी पीटते, परन्तु काशी की माँ ने रोकर वर्जित किया, 'मेरे एक ही सन्तान है। उसका मुँह देखो। क्यों मारे डालते हो। मर जायगा तो क्या होगा?'

मारपीट से निश्चिन्त हो कर और पुन्ना को आँगन में वैसा ही पड़ा छोड़ कर रामपरख बीड़ी पीने लगे। कनखियों से पुन्ना की अवस्था को भी देखते थे। जब तक उन्होंने दो तीन बीड़ियाँ पीं तब तक पुन्ना को होश आने लगा। क्रोध तो शान्त हो चुका था, आत्मा की उठती हुई ग्लानि दबा ली गई। एकाधबार मन में आया, 'इतना नहीं मारना चाहिये था; परन्तु जिमींदारी अभिमान और पुन्ना का अप-

...था; 'बिना मार पीट के काम भी तो नहीं चल सकता।' एकाधबार भीतर से ही कोई जरा सा छू जाता था—'दण्ड की मात्रा यह ! क्या अपराध को भी नापा ?' परन्तु यह बात राख के बड़े ढेर में छोटी सी चिनगारी की तरह थी।

[४]

उसी रात कुपच्च के कारण काशी को क़ै आई और दस्त भी। ज्वर भी साथ था। माँ रात भर जागी। दूसरे दिन उसने भी बिस्तर पकड़ा। नित्य की तरह पुन्ना काम में लगा हुआ था, रामपरख बहुत अनमनें थे। सन्ध्या समय काशी की माँ कुछ सँभली। उसने अपने बच्चे के लिये मानता मनाई; 'चबूतरे पर बैठक करवाऊँगी। दान पुन्न और खर्च करूँगी। भगवान मेरी डाल को हरा रक्खें।' रामपरख को बुलाया। उनसे कहा, 'तुमको एक बात मालूम है ?'

रामपरख—'कौन सी ?'

पत्नी—'गाँव भर जानता है और तुमको नहीं मालूम ?'

रामपरख—'बात तो बतलाओ।'

पत्नी—'पुन्ना के सिर देवता आने लगे हैं।'

रामपरख—'सब ढोंग है।'

पत्नी—'ढोंग तो है ही। उस दिन बैठक में चबूतरे पर सारे गाँव के सामने पुन्ना को देवता ने दे दे मारा, लोहू की धारें बह निकलीं: फेन पर फेन निकले और रात भर वह वहीं पड़ा रहा, इस पर भी ढोंग बतलाते हो ? तुम्हारी बुद्धि को क्या कहूँ।'

राम परख—'और कोई बात ?'

पत्नी—'दिन भर बैठे बैठे चिलम पिया करो। काशी को नहीं देखते उसकी क्या हालत हो रही है। उल्टी बन्द होने को नहीं आती।'

राम परख—'दस्त बन्द हो गए हैं। उल्टी भी बन्द हुई जाती है। चिन्ता मत करो।'

पत्नी—'मेरा जी भी बहुत मचला रहा है। मेरा बच्चा अच्छा हो जाय, चाहे मैं मर जाऊँ।'

रामपरख—'जो दवा दे रहा हूँ उससे आराम मिलेगा। घबराओ मत।'

पत्नी—'आज रात बच्चे की और मेरी, दोनों की, देख-भाल तुमको करनी होगी। मैं मर जाऊँ तो सबेरे जला आना, परन्तु बच्चे को किसी प्रकार का कष्ट हुआ तो अच्छा न होगा, याद रखना।'

रामपरख—'मेरे भी सिर में पीड़ा है। आज से नहीं, कल से, जब से उस चोर पुन्ना को ठोका पीटा।'

पत्नी—'तुम्हारा वह पीटना ही तो सब उपद्रव की जड़ है। उसी समय से काशी बीमार है, उसी घड़ी से मेरा जी मचला रहा है, उसी क्षण से तुम्हारा सिर दुख रहा है। इस पर भी कहते हो कि पुन्ना ने चबूतरे पर बैठक में निरा ढोंग किया था।'

रामपरख ने साँस भर के पूछा, 'क्या करना चाहिये ?'

पत्नी ने गला भर कर उतर दिया, 'मैंने मानता मानी है। बैठक करवाओ और देवता को जैसे बने शान्त करो नहीं तो बड़ा अनर्थ होगा।'

इतने में काशी का वमन शान्त नहीं हुआ था, ज्वर का भी प्रकोप था। अब वह बकवाद करने लगा। कहता था, 'दादा तुमने पुन्ना को मारा, वह हमको मार रहा है। पुन्ना को बुला दो। पुन्ना को बुला दो।'

पुन्ना समीप ही काम कर रहा था। सुन कर आ गया। बोला, 'भैया क्या है ? कैसा जी है ?'

काशी तुरन्त बोला, 'पुन्ना, हमको पेट में सुइयाँ मत चुभाओ। हमारा गला मत जलाओ। हमारे शरीर में आग लग रही है। पुन्ना आग को ठंडा कर दो।'

रामपरख चकित, दुःखित और मोह-मूढ़ हो गए। काशी की माँ रो उठी। पुन्ना से बोली, 'अब कभी ऐसा नहीं होगा।'

'कैसा ?' पुन्ना ने पूछा।

काशी की माँ ने उतर दिया, 'आज ही चबूतरे पर बैठक करवाओ। गाँव में खबर कर दो।'

'भैया क्या कह रहे हैं ?' पुन्ना ने प्रश्न किया।

रामपरख ने उत्तर न देते हुये पुन्ना से कहा, 'देर मत कर। बैठक का बुलावा दे आ। जा। सवाल मत पूछ।'

पुन्ना चला गया। वह मुस्कराता हुआ गया था इसको पति पत्नी या किसी ने भी नहीं देख पाया।

[५]

रात को बैठक हुई। ढोल और झाँझ इत्यादि बाजे बजे। कठोर ध्वनि के साथ गाना हुआ। वे दोनों नावते सामने भी आए थे। होम होता जाता था और उनके सिर झूमते जाते थे। वे दोनों 'ओ, ओ, हूँ, हूँ' करने लगे। बाजे बन्द कर दिये गए। रामपरख जिमींदार प्रार्थी के रूप में उपस्थित हुये।

उन्होंने कुछ कह नहीं पाया था कि पुन्ना बड़े जोर के साथ चीखा और धड़ाम से गिर पड़ा। लोटने लगा। प्रचंडता के साथ हाथ पैर जमीन पर पटक रहा था, मानो चबूतरे के खंड खंड कर डालेगा। चबूतरे के जिस भाग की ओर पलोट लगाता था उसी ओर के लोग उठ भागने को तैयार मालूम होते थे। एक बार पुन्ना होम की अग्नि पर भी पलोट लगा गया और वह लगभग बुझ गई। नावतों के देवता तो कूच कर गए। पुन्ना के देवता को शान्त करने के उपाय किये जाने लगे। 'आप कौन हो महाराज? आप क्यों पधारे हो? आपकी क्या सेवा होनी चाहिये?' इत्यादि प्रश्नों की झड़ी लग गई।

देवता के सिर आने की क्रिया को ढोंग कहने वाले रामपरख भी अचरज के सन्नाटे में थे। अन्त में पुन्ना को कुछ ठहरता सा देख कर एक नावते ने प्रार्थना की' 'महाराज की क्या आज्ञा है?' 'हूँ, हूँ, हूँ।' पुन्ना ने उत्तर दिया और मुट्ठी में होम की अधबुझी आग लेकर चारों ओर बिखेर दी। लोग भयभीत हो कर भागे और फिर तुरन्त इकट्ठे हो गए। नावते ने हाथ जोड़ कर कहा, 'महाराज, आप कौन हो और क्यों इतना तेज प्रकट कर रहे हो, बतलाया जावे। गाँव में किसी को सताया न जावे।' पुन्ना स्थिर हुआ, परन्तु झूम काफी रहा था। 'हुङ्कार के साथ प्रचण्ड स्वर में बोला, 'रामपरखवा साला कहाँ है?'

'हाजिर हूँ, 'रामपरख ने कम्पित स्वर में उत्तर दिया।'

पुन्ना—'हूँ, हूँ, तुझको कच्चा चबा लूँगा। कच्चा, साले!'

रामपरख—'क्यों?'

उसी समय रामपरख की पत्नी घूँघट डाले बिना सङ्कोच के बोली, क्षमा महाराज, क्षमा।'

रामपरख क्षुब्ध हुआ, परन्तु उसकी घिग्घी बँध गई। पुन्ना ने होम की राख में से थोड़ी सी अपनी चुटकी में ली।

रामपरख ढीला हुआ। उसने विनय पूर्वक पूछा, 'आप कौन हो महाराज?'

पुन्ना—'हुँ, हुँ, हुँ, हुँ, हम हैं महानदी वाले।'

एक नवता—'यहाँ क्यों पधारे?'

दूसरा नवता—यहाँ क्यों कृपा की?'

पुन्ना उत्तर देता गया उन्हीं हुङ्कारों के साथ।

पुन्ना—'इस गाँव का सत्यानास होने वाला है।

हम इसको मिटायेंगे। रामपरखवा बड़ा अत्याचारी है। इसको कुचल कुचल कर रगड़ रगड़ कर मारेंगे।

रामपरख की पत्नी—'क्षमा महाराज, क्षमा।'

पुन्ना—'चुप बहिन। अकेली तुम लक्ष्मी हो। इसलिये दया आती है, नहीं तो आज ही रात को दस्त कै की बीमारी से सारे गाँव को साफ कर देता।'

रामपरख—'मेरा अपराध माफ किया जाय।'

पुन्ना—'तू पापी है, महा पापी है। भजन पूजन कर। दीन दुखियों को मत सता। किसानों को सुख से रहने दे, नहीं तो तू नहीं बचेगा और तेरा कोई नहीं बचेगा।'

रामपरख की पत्नी ने रुदन पूर्वक कहा, 'क्षमा महाराज, क्षमा। मेरी डाल की रक्षा करो।'

पुन्ना—'इस घमण्डी रामपरखवा का सिर कुचला जावेगा। इसको नहीं छोड़ूँगा।'

रामपरख ने सहज ही, बिना प्रयास, चबूतरे पर सिर टेका। बोले, 'महाराज की जो आज्ञा है वही करूँगा। मेरे बच्चे को दान में दीजिये।'

पुन्ना—'इतने से काम नहीं चलेगा। महानद देवता का पक्का चबूतरा कल ही बनवाओ। एक बकरा, ५ नारियल, २ सेर बताशे चढ़ाओ और आगे से सावधान रहो। कभी चूके तो तुम्हारी चटनी बना डाली जावेगी।'

रामपरख ने नम्रता पूर्वक स्वीकार किया। रामपरख की पत्नी पुन्ना के पैरों पर गिरने को ही थी कि पुन्ना ने बड़े जोर की चीख मारी और धड़ाम से हाथों के बल सामने गिर पड़ा। रामपरख की पत्नी उसके संघर्ष से बाल बाल बची।

पुन्ना चुप हो गया, केवल व्यग्रता के साथ साँस ले रहा था।

नावतों ने तै किया, 'बड़ा प्रचण्ड दौरा था। ऐसा दौरा तो केवल बहुत तेजस्वी देवता का ही होता है। बिचारे की हड्डी हड्डी तोड़ डाली है और नस नस ढीली कर दी है।'

रामपरख ने कहा, 'बहुत सीधा नौकर है। कभी पहिले इसके कोई देवता या भूत नहीं आया।'

नावतों ने फिर निर्धार किया, 'इसको कोई नहीं जानता कि कब किसके सिर कौन देवता आ जावे। हम लोगों को तो फूक फूक कर पैर रखने पर भी देवता की ओर निगाह रखनी पड़ती है। कोई कोई देवता बड़े टेढ़े होते हैं—और कोई कोई बहुत सीधे भी होते हैं।'

दूसरे दिन रामपरख ने "महानद देवता" का चबूतरा बनवाना आरम्भ कर दिया और पूर्वोक्त आदेशानुसार सेवा पूजा चढ़ाई। लड़के को दवा से आराम होने ही लगा था, दो तीन दिन में अच्छा हो गया।

फिर कभी रामपरख ने पुन्ना को नहीं पीटा। पुन्ना के सिर देवता कभी कभी आता भी, परन्तु फिर कभी उसने रामपरख को गाली नहीं दी। और, फिर कभी काशी ने उतने आम एक साथ नहीं खाए।

याद रखने की बातें

श्री बुद्धिसागर वर्मा विशारद बी० ए० यल० टी०

(१) चिराग में थोड़ा पारा डाल देने से उसके प्रकाश से खटमल भाग जाते हैं।

(२) बिच्छू जला कर उसका धुँवा करने से उस स्थान के सारे बिच्छू भाग जायँगे।

(३) बालू और तैल मिला कर रगड़ने से लोहे का मोर्चा साफ हो जाता है।

(४) धनिया की हरी पती या चन्दन सूँघने से छींके आना दूर होता है।

(५) भट कटैया का फूल, चमेली के फूल, इनका जीरा शहद के साथ चटाने से बच्चों की खाँसी जाती रहती है।

(६) दूध चावल के साथ मीठी वच का चूर्ण कुछ दिन खाने से मिर्गी रोग अच्छा हो जाता है।

(७) मटर और लोबिया में गेहूँ के बराबर कार्बन होता है। इनके सेवन से पट्ठों को ताकत मिलती है।

(८) सेब में फास्फोरस का अंश होता है। अतः इनके सेवन से मस्तिष्क पुष्ट होता है।

(९) यदि दाँतों को सुरक्षित रखना है तो सोते समय मुँह से साँस न लो।

(१०) दिन में कई बार धीरे धीरे दूध पीने से वजन बढ़ता है।

नारी से

लेखक, श्री चिरंजीत

आप अपनी नाव खे री!

पुरुष को माँझी बना कर,
हो गई तू पुरुष-निर्भर,
वह किनारे पर लगा दे या डुबा दे नाव तेरी!
आप अपनी नाव खे री!

पुरुष की चिर-संगिनी तू,
पुरुष की सम कक्षिणी तू,
तू न उसकी सम्पदा है, तू न उसकी क्रीत चेरी!
आप अपनी नाव खे री!

नाव का शृङ्गार बन ना,
पुरुष का खिलवार बन ना,
निज तरी की स्वामिनी बन हाथ में पतवार ले री!
आप अपनी नाव खे री!

बलवती है बाँह तेरी,
और परिचित राह तेरी,
क्या हुआ यदि नाव जर्जर, क्रुद्ध सागर, निशि अँधेरी!
आप अपनी नाव खे री

तुम चलती हो

लेखक, श्री वीरेश्वर सिंह एम० ए० एल० एल० बी०

तुम चलती हो—
उन अमल कमल चरणों से प्रिय,
मेरे आँगन की धूल परस परिमल पावन तुम करती हो।
तुम चलती हो—
तो ऐसा लगता है प्यारी,
जैसे सिकता तल पर अकूल कल-गति मंदाकिनि बहती हो।
मेरे जीवन के क्षण-क्षण पर,
पद रख तुम चलती हो अजान,
मेरे जीवन के कण-कण में,
तुम रचती हो तीरथ महान।
जग की असीम निर्जनता में—
जीवन के दोनों कूल चूम,
नव-जीवन के स्वर भरती हो ॥१॥

तुम चलती हो—
ज्यों रङ्ग-भरे मधु कुञ्जों में,
लेकर पराग प्यारे कुसुमों का मीठी हवा मचलती हो।
तुम चलती हो—
तो ऐसा लगता है प्यारी,
जैसे उल्लास-भरी सावन की श्यामल घटा उमँगती हो।
फिर कोई दीप जलाता है,
मेरे मन की अँधियारी में,
बलि-जाता प्रेम-शलभ उड़ कर,
तेरी अनिंद्य उँजियारी में।
फिर रोमांचित अमराई में—
मन यौवन से बातें करता,
तुम मधुर बाँसुरी बजती हो ॥२॥

तुम चलती हो—
मेरे गति-हत, श्लथ जीवन में,
तुम मधुर तरंगिनि! जीवन के जय-राग नए फिर भरती हो।
तुम चलती हो—
तो ऐसा लगता है प्यारी,
जैसे काशी की गङ्गा पर हँस पहली रश्मि फिसलती हो।
स्वप्नों के स्वर्णिम कंगूरे,
हो कर साकार चमकते हैं,
सुख भाव आँख मलते-मलते,
मन की सीढ़ियाँ उतरते हैं।
रसमयि! तुम हँस उन भावों में—
फिर जगी हुई अपनी दुनिया की,
नई तरंगे भरती हो ॥३॥

तुम चलती हो—
अपने पायल की रुनझुन से,
तुम सूने वर्तमान में भावी के नव गुञ्जन भरती हो।
तुम चलती हो—
तो ऐसा लगता है प्यारी,
ज्यों प्रेम अटारी पर बूँदें मृदु रिमझिम-रिमझिम करतीं हों।
फिर जाने कब-कब की कलियाँ,
खिल पड़तीं हैं डाली-डाली,
फिर से हर्षित लहराती है,
जग में भावों की हरियाली।
फिर से जीवन-रसाल में प्रिय,
गदरातीं नई-नई अमिया,
तुम कोयल बनीं कुहुकती हो ॥४॥
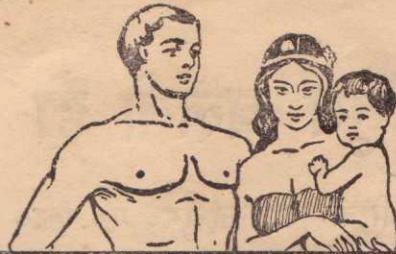
सुन्दरी बनो !

यदि आप सुन्दरी बनना चाहती हैं तो एक बात याद रक्खें। वह यह कि सौंदर्य कोई प्राकृतिक देन नहीं है। वह इच्छा और प्रयत्न से प्रत्येक स्त्री को प्राप्त हो सकता है।

सौंदर्य का सबसे बड़ा सहायक रक्त है। जिस शरीर में शुद्ध और काफी रक्त नहीं वह कदापि सुन्दर नहीं दिख सकता। क्योंकि रक्त ही त्वचा को स्निग्ध और कोमल रखता है। अतएव आप अपनी त्वचा देख कर जान सकती हैं कि आपके शरीर में रक्त की क्या दशा है। यदि आपकी त्वचा सूखी है तो समझिए कि आपके रक्त में कुछ विकार है। तैल, फुलेल, पाउडर, आभूषण और शृङ्गार से आप त्वचा के दोषों को नहीं छिपा सकती हैं। ये चीजें सौंदर्य को बढ़ाने में सहायक होती हैं जरूर। परन्तु जब भीतर से रक्त ही जोर नहीं मारता तब ये बाहरी उपचार व्यर्थ हैं। इसलिए सबसे पहले इस बात पर ध्यान दो कि आपका रक्त शुद्ध और स्वस्थ रहे।

रक्त शुद्ध कैसे रह सकता है? आपके रक्त को क्या मिलना चाहिए कि वह आपके बालों की जड़ों को सींचता रहे, आपकी त्वचा को कोमल बनाता रहे, आपके नाखूनों और दांतों को मोती सा निखारता रहे और आपके नेत्रों में ज्योति भरता रहे?

इन सब कामों के लिए रक्त को प्रतिदिन वे जीवन तत्व मिलने चाहिए जो वह भोजन से ले सकता है। उसे शरीर को सुन्दर बनाए रखने के लिए विविध प्रकार के क्षार और नमक चाहिए, विटैमिन चाहिए। इसलिए आप ऐसा भोजन करें जिसमें ये चीजें काफी मात्रा में मौजूद हों। उदाहरण के लिए यदि आप अपने बाल काले और घने रखना चाहती हैं तो ऐसी चीजें खायें जिसमें आयोडिन और गंधक की मात्रा अधिक हो। ये चीजें गेहूँ के चोकर, गोभी, गाजर, अंगूर, मटर और अन्य शाकों में होती हैं। आखों की ज्योति के लिए फास्फोरस चाहिए। यह घी, मक्खन, दूध आदि में मिलता है। यदि आप बड़ी बड़ी चमकदार आखें चाहत हैं तो ये चीज जरूर और रोज खाएँ। इसी प्रकार और भी समझें। रक्त को शुद्ध और पुष्ट बनाने वाला भोजन करें। यह भोजन ताजे फल, हरे पत्ते वाले शाक साबूत गेहूँ दूध और घी हैं। इन भोजनों के बारे में दीदी के पिछले अंकों में विस्तार के साथ लिखा जा चुका है।

भोजन पर ध्यान देने के बाद थोड़ा व्यायाम पर ध्यान दें। ऐसा व्यायाम करें जिससे रक्त शुद्ध हो। रक्त फेफड़ों में आकर शुद्ध होता है। अतएव ऐसा व्यायाम करें जिससे फेफड़े मजबूत हों। शुद्ध खुली जगह में प्रतिदिन प्रातः काल खड़ी होकर गहरी साँसें लें। प्राचीन काल में आर्य्य लोग प्राणायाम करते थे। प्राणायाम और कुछ नहीं फेफड़ों का व्यायाम है। इसीलिए आर्य्य स्वस्थ और सुन्दर होते थे।

श्री सन्तराम बी० ए० ने अपनी पुस्तक नीरोग कन्या में कुछ और व्यायाम भी बताए हैं जिनसे सौंदर्य बढ़ता है। यहाँ प्रकाशित रेखा चित्रों को देखें और नीचे लिखे व्यायाम को करें।

सीधी खड़ी होओ।

सिर को दाईं ओर झुकाओ, फिर ऊपर की ओर उठाओ फिर बाईं ओर झुकाओ, फिर ऊपर उठाओ। चित्र नं० १।

प्रति दिन प्रातः काल खुली हवा में तन कर खड़ी होओ और गहरी साँसें लेने का अभ्यास करो।

धड़ को आगे की ओर झुकाओ, फिर सीधा करो, फिर पीछे ले जाओ, फिर सीधा करो। चित्र नं० २।

चित्र नं० २ की भाँति धड़ के व्यायाम करो। पर उसकी अपेक्षा आगे पीछे की ओर कम झुकाओ। चित्र नं० ३।

सिर और धड़ को बारी बारी से 'दोनों कन्धों की ओर झुकाओ। चित्र नं० ४

दोनों हाथ कमर पर रहें। आगे की ओर झुको पर सिर कमर की सीध पर रहे। फिर सीधी तन कर खड़ी हो जाओ। चित्र नं० ५।

दोनों हाथों को सामने की ओर फैलाओ। धड़ और

इन व्यायामों को हिदायत के अनुसार करो।

सिर को उनके बीच में लाओ। फिर सीधी हो जाओ। चित्र नं ६।

दोनों हाथों को ऊपर उठाओ। बाहें फैली रहें। आगे की ओर झुको। फिर सीधी उसी प्रकार तन जाओ। चित्र नं० ७।

ये प्रत्येक व्यायाम कई बार करो। किस व्यायाम में कितना झुकना चाहिए यह रेखाओं द्वारा दिखा दिया गया है। इन व्यायामों से पीठ, छाती, गर्दन आदि अंग स्वस्थ, सुडौल और सुन्दर बनते हैं और फेफड़े पुष्ट होते हैं।

सतित्व की रक्षा के लिए पुत्र की बलि

लायलपुर २३ नवम्बर—जलन्धर जिला की एक प्रतिष्ठित घराने की हिंदू देवी यहाँ से जडांवाला जाने के लिए मोटर-अड्डे पर आई। अब्दुल रहीम नामी ड्राइवर ने अपने ४५ साथी लिए और उसे बिठा कर चल पड़ा। राह में लारी रोक कर उन्होंने बलात्कार की चेष्टा की। विरोध करने पर उसके पुत्र की हत्या कर देने की धमकी दी गई। पर वह विचलित न हुई और आततायियों ने पुत्र को उसकी आँखों के सामने मार डाला। माता यह सब सहा पर सतित्व न गँवाया। आखिर कुछ राहगीरों ने आकर अब्दुल रहीम को पकड़ लिया और उसे सम्बन्धियों के पास पहुँचाया।

एक सुन्दर सामाजिक कहानी

तलाक़

लेखिका, श्रीमती कमला शिवपुरी बी० ए० बी० टी०

रेखा ने कभी भी अपने राह में काँटे नहीं पाये, जो कुछ उसने चाहा उसके पिता ने मान लिया। उसके पिता ने उसको उसकी इच्छा के अनुसार लड़कों के कालिज में पढ़ाया, जब कि कई कालिज जगह जगह लड़कियों के भटियारे की दुकानों की तरह खुल रहे थे। उन्होंने उसे पूर्ण रूप से जैसे स्वराज्य दे रखा था। उसी क फल स्वरूप रेखा ने अपना पति भी इच्छानुसार चुन डाला।

पिता को कुछ आपत्ति थी भी पर क्या उनकी पुत्री कुछ सुनने के लिए प्रसतुत थी? रेखा ने पति चुन भी लिया और बी० ए० की परीक्षा देते ही उससे विवाह भी (सिविल मैरिज) कर लिया। पिता ने सोचा—"आज कल होता ही ऐसा है तो मेरी पुत्री क्या करे। 'सिविल मैरिज' ही ठीक है। जो कुछ भी हो रेखा है बड़ी चतुर।"

कारण यह था कि रेखा उनकी अकेली सन्तान थी। वह पत्नी के न रहने से उन्हें बहुत प्रिय हो गई की। उसकी बात कोई भी उन्हें बुरी न लगती हो यह बात न थी पर हाँ वह कुछ सोच कर इसी नतीजे पर आते कि रेखा समय को देखते बहुत चतुर है।

रेखा के पिता की आय अच्छी थी। ३,००० रुपये माहवार कमाते थे, और रहते भी ठाठ से थे। इससे रेखा का पालन बहुत ही ठाठ से हुआ।

रेखा ने जो पति चुना वह कुछ समय पहले उसी कालिज में पढ़ता था और उसी में प्रोफेसर की पदवी पर आया, रेखा की हैसियत देखते हुए वह कुछ भी नहीं था पर मन ही तो है न? उधर ही झुक गया, तो रोका क्यों जाय? रेखा को कोई रोकने की आवश्यकता भी न थी। पिता उसके कहे में थे ही।

प्रोफेसर प्रेम को आगरा कालिज में ३००) माहवार पर रख लिया गया और उनकी पत्नी, उनकी गृहलक्ष्मी उनके घर आ गई, हर वर्ष पहाड़ पार जाने का अभ्यास था सो कैसे छूटता। पर ३००) तो रेखा के लिए बहुत कम थे। इससे दोनों में विवाह से पूर्व ही यह तय हो चुका था कि गर्मी में वह अपने पिता के सिर होकर जहाँ इच्छा होगी जावेगी।

दूसरा वर्ष विवाह का था। वह अबकी नैनीताल गई थी, पिता उसके मसूरी। शाम का समय था। मिलने वालों की सदा ही भीड़ सी लगी रहती। फिर रेखा थी भी सुन्दर, अकेली और स्वतन्त्र विचारों की। तिस पर उस दिन तो रेखा ने चाय की दावत भी करी थी। नौकर तो सधे हुए थे ही, वर्दी पहने खूब काम में लगे थे। रेखा ने देखा उसके प्रिय मित्र अशोक के साथ एक अपरिचित व्यक्ति भी हैं, आयु कुछ अशोक से अधिक रही होगी।

रेखा के दिल में हलचल मचने लगी, क्या मुस्कान है इसकी कैसी चितवन, और बात करने से और भी मालूम हुआ कि जैसे स्वर्ग से ही उतर पड़ा हो। वह भी जैसे रेखा की ओर एकदम खिंच गया। दोनों में तत्काल प्रेम हो गया। धीरे धीरे मिलना बढ़ने लगा। पर अशोक को अधिक ईर्ष्या नहीं हुई क्योंकि मिस्टर कुमार चाहें आई० सी० एस० थे और खासी २,५०० की तनख़ाह मार रहे थे पर थे तो बड़ी आयु के। कुछ कुछ बाल भी सफेद हो चले थे कनपटी के। इससे ईर्ष्या भाव मन में अधिक ठहरने न पाया।

एक दिन रेखा के बँगले में बिलकुल सन्नाटा था। नौकर चाकर रसोई में लग रहे थे। रेखा और मिस्टर कुमार ड्राइङ्ग रूप में बात चीत कर रहे थे। कुमार ने कहा—

"रेखा! मेरी कुछ समझ में नहीं आता कि तुमने मुझ पर कौन जादू कर दिया है।"

रेखा ने मुस्करा कर उत्तर दिया—"वही मैं आप से पूछती हूँ।"

"पर पहले तो मैंने पूछा, मुझे उत्तर भी पहले मिलना चाहिये।"

"प्रेम हो गया होगा क्यों?"

"कहती तो ठीक हो, पर यह तो कहो कि इसका अन्त कैसा रहेगा, सुखान्त रखोगी या दुःखान्त होगा।"

"कह तो चुकी बार बार क्या पूछते हो ।"

"योंही कि कहीं कमजोरी न आ जाय, हो तो औरत ही न । पति का मुँह देखते ही ।"

"बस चुप रहिये । ऐसा मत समझियेगा, यहाँ ऐसा कच्चा दिल नहीं रखती, दावे के साथ कहती हूँ कि जितने कठोर आप रह सकते हैं अपनी पत्नी की ओर ! उतनी ही मैं भी रह सकती हूँ पति की ओर, क्या अब भी डर है ? नहीं पहचान सके ।"

"पहचान तो मैंने खूब लिया पर जरा डर लगता है । तुम सीधी ही क्यों नहीं मेरे साथ चलतीं । आगरे जाने से सारा बना बनाया प्रोग्राम बिगड़ गया तो ।"

"आगरे जा कर मैं साफ कहना चाहती हूँ । छुप कर जाने में क्या कलेजा है ? समझे कुमार ।"

"मुझे भय है कि कही तुम फिर वहीं रह न जाओ । मैं बड़ी ईर्ष्या कर सकता हूँ रेखा । कहीं मैं तुम्हारे पति को देख कर··········।"

"घबराओ मत, वह बड़ा दब्बू सा आदमी है । हँसते हँसते काँपता-काँपता तो वह स्टेशन पर आवेगा । बात तक अधिक मुँह से न निकलेगी । तुमसे लड़ाई तो कैसी ?"

"तो हम यहाँ से आज रात को जा रहे हैं न । परसों तुम्हें मैं इसी समय देहली पर मिलूँगा । भूल मत जाना रेखा ! मन तो न बदलेगी ।"

"नहीं नहीं नहीं ! और कितनी बारक हूँ ।"

"बस परसों से तो तुम बिलकुल मेरी ही होगी । फिर मैं तुमको अशोक अतुल, राय वगैरह लफङ्गों से बिलकुल मिलने भी न दूँगा । तुम बिलकुल मेरी ही रानी······।"

"श···चुप कोई दरवाजे के पास से गुजरा ।"

किसी से मैं भी नहीं डरता ।

"वैसे तो मैं भी स्वतन्त्र हूँ । डर क्या है पर परसों तक जरा सा और ।"

"अच्छा तो स्टेशन पर कार में लेता चलूँ ।"

"नहीं अभी तो मैं अपनी कार में आऊँगी । क्योंकि बड़ा कदम उठा रही हूँ । सो जरा दूर रहूँ तो किसी को शंका न हो । पीछे मुझे कोई डर नहीं । बस प्रेम से कह भर दूँ ।"

समय भली भाँति कट गया, आगरे के स्टेशन पर प्रेम लेने आया था । पर वही दुर्बल शरीर, गोल शीशे की रिम वाली गँवारू ऐनक चढ़ाए हैं हैं करती हुई काँपती सी आवाज़, गिड़गिड़ाता सा आ कर खड़ा हो गया । रेखा ने यह चित्र देखा तो सोचा, मैंने इसे पहले कैसे पसन्द कर लिया था, आश्चर्य है ।

प्रेम ने पूछा—अच्छी तरह रहीं कोई तकलीफ तो नहीं हुई हैं हैं ।

कुछ देर आराम किया, सबेरा हो ही गया था । थोड़े ही समय में प्रेम के मित्र रेखा से मिलने आए । हूँ हा में उसे प्रेम से कुछ कहने का समय न मिला ।

सोचा अच्छा यह बात खाने के बाद अवश्य हो जानी चाहिये मुझे शाम की ट्रेन से जाना भी तो है । पर प्रेम ने तो जैसे कुछ इसकी ओर कुछ ध्यान ही न दिया । खाने पर भी मित्र थे, दो बजे दोपहर को वह लोग बिदा हुए तब रेखा को समय मिला । काफी कड़क कर बोली—'प्रेम ।'

'हाँ क्या बात है ।'

'मुझे तुमसे कुछ कहना है । मैं सबेरे से राह देख रही हूँ कि अवसर मिले तो कहूँ ।'

'अवसर की क्या बात थी, कह दी होती ।'

रेखा ने मुँह बना कर तेवरी चढ़ा कर कहा—'वह बड़ी गम्भीर है ।'

'मैं खुद सबेरे से एक बात कहना चाहता हूँ ।'

'तुम ?'

'हाँ ! हाँ !' बड़े काँपते हुए ।

'तो कह डालो ! क्या बीमार हो या कुछ नौकरी में ।'

'नहीं दुख की नहीं, कुछ अच्छी ही है ।'

'वह क्या तरक्की । कह भी चुको ! मुझे जरूरी बात कहनी है ।'

'वही तो कह रहा हूँ मेरी एक लड़की से मित्रता ।'

'उसमें तो कुछ खास बात नहीं ?'

'पर खास ही हो गई, प्रेम हो गया है ?'

'हैं । कब से ?'

'तुम्हारे जाने के कुछ दिन बाद ही ।'

'तुम एक महीना भी मेरा ध्यान न कर सके ?'

'क्या करूँ वह बड़ी अच्छी थी । वह मेरा इतना ध्यान रखती थी । और वह गर्मी भर तेरे मारे आगरे में ।'

"तो तुमने कोठी छोड़ दी, होटल में कमरे लिए, किस लिए, एक कमरा अपने लिए अलग......।"

"यही तो मैंने सोचा कि तुम पसन्द नहीं करोगी। इसीसे तुम्हारे लिए अलग होटल में कमरा कर दिया था।"

"मुझसे बिना पूछे यह सब।"

"मैं जानता था तुम्हें बहुत बुरा लगेगा पर।"

रेखा—(स्वभिमान भर कर) तुम ! तुममें इतना साहस कि मेरा अनादर कर रहे हो। 'मैं उस औरत को ठीक कर दूँगी। कुचल दूँगी।'

'पर रूप तो वापिस गई कल ही।'

'ओ हो तो यह सब प्लाट है मेरे खिलाफ।' सब पहले ही से तय कर लिया ! पर मैं न जाऊँगी कहीं।

रेखा ने उसी समय जा कर फिर से कोठी ली। साथ में प्रेम को भी ले गई। और बोली कि अब मैं तुमको रूप से मिलने न दूँगी।

इधर उधर पूछने से मालूम हुआ कि रूप एक प्रोफेसर की बहन है। वह गर्मी में अपने भाई के पास आई थी। सब उसकी प्रशंसा करते थे।

इतने में महीना भर बीत गया। रेखा जासूसी करती ही रही। एक दिन उसको कुमार का पत्र मिला। जी भर कर गाली दी थी। बुरा भला कहा था।

इसने सोचा, अच्छा ही हुआ जो इस नर पिशाच से बच गई। कितनी बुरी भाषा। यह सब सोच कर इसने प्रेम पर विचार किया। वह इतना बुरा तो न था। उसकी कमजोरी उसकी काँपती बोली तो बेशक बुरी थी पर सबमें दुर्बलता किसी न किसी प्रकार की होती ही है। फिर क्यों इतना बुरा लगता था। उफ कितनी असावधान रही मैं। कुमार ऐसी नीच भाषा बोल या लिख सकता है, कभी स्वप्न में भ न सोचा था। इतने में प्रेम आया। वही कम बोलना, अधिक प्रेम की बातें न बनाना। वहीं कुछ घबराया सा, पर रेखा इस समय उसकी त्रुटियों को क्षमा करने को तयार थी।

रेखा ने कहा—'सच ! मैं तुम्हारे साथ अन्याय कर रही थी या करने वाली थी ? कितना गजब होता।'

प्रेम ने कहा—'अरे हाँ मैं भी कहना सोच रहा था कि वह जो रूप का किस्सा था न, उसको अपने तक ही रखना।'

क्यों ? क्या बदनामी से डरते हो। या अब मुझसे डरते हो ? मैं अब गर्मी में कहीं पहाड़ नहीं जाऊँगी समझे ! तब देखूँ, रूप क्या कर पाती है। मैं खूब सुनाऊँगी उसे।'

प्रेम बोला—'यह गजब न करना। वह तो गढ़ी हुई बात थी। उसमें सत्य नहीं था। वह बिचारी क्या समझती।'

रेखा—हैं। सत्य नहीं था तो क्या मुझे दुखाने को यह रचा था। सच ?

प्रेम—सच बिलकुल सच।

रेखा—क्यों ऐसा क्यों किया ?

प्रेम—अशोक व अतुल की चिट्ठी मेरे पास आती थीं। पहले तो सब ठीक था। पीछे उसने मुझे तार से इत्तला दी।

रेखा—तार से क्या इत्तला दी ?

प्रेम—कुछ नहीं। पहले भी वह लिख चुका था कि तुम कुमार के चंगुल में फँस रही हो। मैं घबरा गया। सोचा देखो प्रयत्न करना अपना काम। फिर मुझे तार मिली कि तुम दोनों जल्द देहली में साथ रहने वाले हो। और जब उसी ट्रेन में देखा कि कुमार भी हैं बस मैंने अपना निर्णय पक्का कर लिया। अब तो तुम मेरी ही हो न !

रेखा निकट आ कर—हाँ अब ऐसी भूल न करूँगी। मैं तो सचमुच तुम्हें छोड़ने वाली थी।

प्रेम—तो मैंने ठीक किया न ?

रेखा—हाँ ! तुम सचमुच प्रेम करना जानते हो। तुम साथ नहीं थे तो तुम्हारे गुण धुँधले हो गए। अब मैं कहीं नहीं जाऊँगी तुम्हें छोड़ कर।

चुटकुले

न्यायधीश—(मुलजिम से) क्यों तुमने इसको जूता मारा ?

मुलजिम—जी हाँ ! इसने मुझे गाली दी थी।

न्यायधीश—अच्छा तो तुम पर ५) जुर्माना किया जाता है।

मुलजिम—हुजूर ! अगर इजाजत हो तो इसके एक जूता और मार लूँ। मेरे पास १०) का नोट है। कहाँ लिये लिये भुनाता फिरूँगा।

—गायत्री वर्मा, लखनऊ

...खोगी या दुः...

आप क्या चाहतीं हैं—

पुत्र या पुत्री ?

लेखक, श्री सन्तराम, बी० ए०

इङ्गलैंड आदि योरोपीय देशों में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत अधिक है। युद्ध के कारण वहाँ पुरुषों की संख्या और भी घट गई है। इसलिए वहाँ के लोग उन कारणों का पता लगा रहे हैं जिनका असर माता के गर्भ में भ्रूण के पुत्र या पुत्री बनने पर होता है। प्रायः देखा गय है कि युद्ध या अकाल के दिनों में लड़कियों की अपेक्षा लड़के अधिक उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त एक और बात भी देखी गई है। कोई देश और परिवार जितना अधिक शिक्षित और सभ्य होता है उसमें लड़कियों की संख्या उतनी ही अधिक होती है। दिन-रात पसीना बहा कर रोटी कमाने वाले मजदूरों के घरों में प्रायः लड़कियों की अपेक्षा लड़कों की संख्या अधिक होती है। इसके विपरीत सुख का जीवन बिताने वाले धनियों के यहाँ पहले तो सन्तान होती ही बहुत कम है और फिर जो होती भी है उसमें लड़कियों की संख्या अधिक होती है।

डाक्टरनी अरेबला कनीलो ने विलायत के 'डेली मेल' नामक समाचार पत्र में लड़के और लड़कियों की उत्पति पर एक महत्वपूर्ण लेख लिखा है। उसमें वे लिखती हैं कि लड़के या लड़की का उत्पन्न होना माता-पिता की अपेक्षा मातृक और पैतृक शक्ति पर निर्भर करता है। यदि पिता में प्राणभूत शक्ति अधिक हो तो लड़कियाँ अधिक उत्पन्न होती हैं। जब माता में अधिक प्राणभूत शक्ति हो तो पुत्र उत्पन्न होते हैं। रोटी कमाने के लिए पिता को माता की अपेक्षा अधिक उद्योग करना पड़ता है। इससे उसकी शक्ति बहुत कुछ खर्च हो जाती है। परन्तु स्त्रियों की शक्ति रक्षित रहत है। इसलिए स्वाभाविक रूप से ही लड़के अधिक उत्पन्नी होते हैं। वैसे भी स्वाभाविक अवस्था में उत्पन्न होने वाली एक सहस्र लड़कियों के पीछे सृष्टि-नियम १०५० लड़के उत्पन्न करता है। कारण यह कि पुरुषों का जीवन स्त्रियों की अपेक्षा अधिक जोखिम में रहता है। इस प्रकार पिता कन्या को और माता पुत्र को जन्म देती है। अर्थात् पुत्र की उत्पत्ति के लिए माता में अधिक शक्ति और उत्तम स्वारूप का होना परम आवश्यक है। हमारे यहाँ भी इस पर एक कहावत प्रसिद्ध है—

माँ पर पूत पिता पर घोड़ा। बहुत नहीं तो थोड़ा थोड़ा॥

इस प्रकार माता-पिता से लड़के में स्त्री के और लड़की में पुरुष के गुण थोड़े-बहुत मिलते रहते हैं। यदि ऐसा न होताहें तो स्त्री और पुरुष के गुण एक दूसरे में मिलने के स्थान पीढ़ी पर पीढ़ी एक दूसरे से अलग होते जाते और एक दिन ऐसा आ जाता जब कि स्त्री सुलभ गुण केवल स्त्रियों में और पुरुष-सुलभ गुण केवल पुरुषों में ही इकट्ठे हो जाते हैं। इससे दो अधरी और अलग-अलग कटी हुई जातियाँ उत्पन्न हो जातीं। युद्ध के दिनों में पुरुषों पर बड़ा बोझ पड़ जाता है। इसलिए उन अपनी रक्षित शक्ति को बहुत खर्च करना पड़ता है। इससे उनमें प्राणभूत शक्ति बहुत कम रह जाती है। इसके विपरीत, युद्ध में स्त्रियों पर काम का भार बहुत कम पड़ता है। उनकी रक्षित प्राणभूत शक्ति बहुत कम खर्च होती है। उसीसे उन दिनों में लड़के अधिक उत्पन्न होते हैं। बड़ी आयु की कारी लड़कियों को पढ़ने-पढ़ाने और पुतली-घर आदि में मजदूरी करने में घोर परिश्रम करना पड़ता है। इससे उनकी प्राणभूत शक्ति बहुत घट जाती है और कन्याएँ अधिक उत्पन्न होने लगती हैं। कारण यह कि पुरुषों की पितृ-शक्ति अपेक्षाकृत बढ़ जाती और माताओं की मातृ-शक्ति कम हो जाती है। शरीर के बढ़ने के दिनों में जब कि लड़कियों में अगली सन्तानों के लिये जीवनी संचित हो रही है, किसी प्रकार का भी घोर परिश्रम करने से स्त्रियों की शारीरिक और मातृक शक्ति बहुत घट जाती है। जिन परिवारों में सभ्यता ने बहुत घर कर लिया है वहाँ लड़कियों को उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए घोर परिश्रम करना पड़ता है। इसीसे उनमें लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ अधिक उत्पन्न

होती हैं। जो लड़के उत्पन्न होते भी हैं उनमें भी अनेक दुबले-पतले, दौले शाह के चूहे, और मरियल से रहते हैं। फिर बाल्यकाल में उनके यहाँ लड़कियों की अपेक्षा लड़के मरते भी अधिक हैं। डाक्टरनी अरेबला लिखती हैं कि मुझे लड़कियों से उनके विवाह के पहले और पीछे कड़ी मजदूरी और पढ़ने पढ़ाने में घोर परिश्रम छुड़ा देने से मुझे ऐसे घरों में पुत्र उत्पन्न कराने में प्रायः सफलता हुई है जिनमें कि चिरकाल से लड़कियाँ ही लड़कियाँ उत्पन्न होती चली आ रही थीं। परन्तु घोर परिश्रम करने से जिन स्त्रियों की तन्दुरुस्ती बहुत बिगड़ चुकी हो वहाँ इस युक्ति से कुछ लाभ न होगा। इसलिए पुत्र-दर्शन की अभिलाषा रखने वाली माताओं को अपनी तन्दुरुस्ती पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

व्यङ्ग-विनोद

वियोगिनी

समुन्दर कर दिया नाम उसका नाहक सबने कह कह कर।
हुए थे जमा चन्द आँसू मेरी आँखों से बह बह कर॥

पुरानी कहावतों का आपटू डेट रूप

लेखिका, श्री रत्नकुमारी, फतेहपुर

पुरानी	नई
(१) आपके मुँह में घी शक्कर।	आपके मुँह में बीड़ी सिगरेट
(२) योजना खटाई में पड़ी है।	स्कीम आइस क्रीम में पड़ी है।
(३) अरहर की टट्टी गुजराती ताला।	काली बीबी जार्जेट की साड़ी।
(४) सिर मुड़ाते ही ओले पड़े।	मूँछ मुढ़ाते ही नौकरी छूटी।
(५) किस खेत की मूली हैं।	किस साहब के नौकर है।
(६) सिर मुड़ा कर सन्यासी हो गये।	बाल घुँघराले बढ़ा कर कवि बन गये।

मलाई के सन्तरे

अच्छे मीठे संतरे १२, मलाई १ पाव, चीनी ३ छटाक, पिस्ते बादाम की हवाइया अन्दाज से, थोड़े से छोटी लाची के दाने।

तरकीब—पहले सन्तरों को लीजिए। ढेप की तरफ से सन्तरों का चौथाई हिस्सा तेज चाकू से काट लें। अब धीरे धीरे भीतर से फाकें निकाल लें। ख्याल रहे कि ऊपर का छिलका फटे न। जब सब संतरों की फाकें निकल जाएँ तो खाली डिब्बों की तरह सन्तरों के कटे हुए हिस्सों को ठीक से रख दें। अब फाँको को छील कर गूदा निकाल लें। गूदों में मलाई, चीनी, पिस्ता, बादाम, लाची के दाने, सब चीजों को मिला कर थोड़ा थोड़ा अन्दाज से सब सन्तरों में भर कर उन्हीं कटे हुए ढक्कनों से बन्द कर दें। लीजिए अब आपके सन्तरे फिर तैयार हो गए। अब मेहमानों के आगे परोसे खाने के लिए एक छोटा चाय वाला चम्मच भी रखें। खाने में बहुत स्वादिष्ट होता है। खट्टे सन्तरों का यह अच्छा न होगा। इसलिए सदैव मीठे सन्तरे चुनें। —लक्ष्मी देवी

फ्रेंच टोस्ट

कुछ गाढ़े दूध में शक्कर डाल कर डबल रोटी के टोस्ट मोटे मोटे काट कर उसमें भिगो दो। जब हल्की हल्की भीग जायें तब दूध से अलग कर लो। फिर अंडे की सुफेदी को निकाल कर खूब फेंटो, जब तक कि साबुन की तरह झाग न आयें, बराबर फेंटती रहो। फिर जरदी को डाल कर फेंटो। जब अंडे का बादामी रंग हो जावे तो बन्द करो। फिर फ्राई पेन या तवे पर हल्का घी डाल दो और भीगे हुये टोस्टों को फिटे हुये अंडे में लपेट कर लाल लाल धीमी आँच पर सेंक लो। टोस्टों को भरे घी में न सेंकना चाहिये। सुन्दरता के लिये टोस्ट में चादी के वरक़ लगा लो। अंडा खाने वालों के लिये यह बहुत ही स्वादिष्ट चीज है। नाश्ते की चीजों में फ्रेंच टोस्ट बहुत मजा देगा।

—प्रतिमा सक्सेना, बरेली
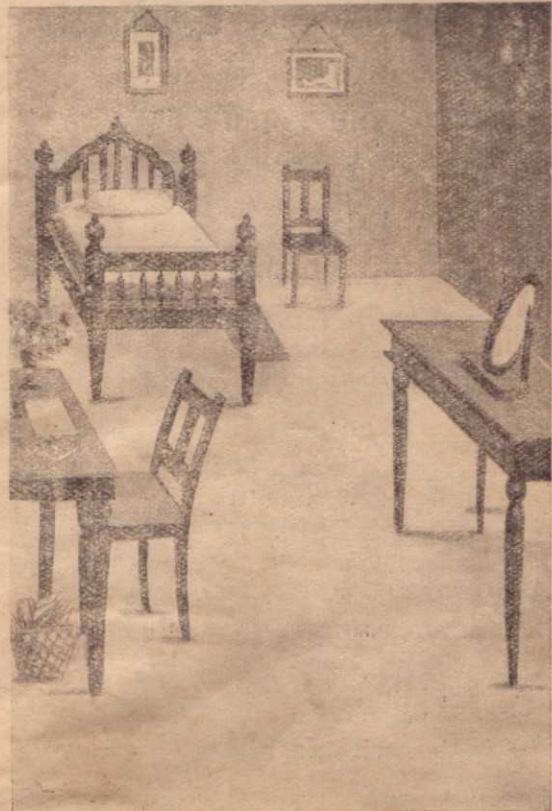
घर की सजावट

स्त्री को अपने घर की सजावट इस तरह करनी चाहिये कि जान पड़े, हाँ इसमें कोई समझदार मनुष्य रहता है। जिन्हें भगवान ने धन दिया है वे सोने, बैठने, लिखने पढ़ने, खाने, सामान रखने के लिए अलग अलग कमरे नियुक्त कर सकती हैं। घर को कबाड़ खाना कभी नहीं बनाना चाहिये और रहने के कमरों में खास कर सोने के कमरे में कम से कम होनी चीजें चाहिये। यहाँ एक शयनागार का चित्र दिया जा रहा है। यह कमरा साफ सुथरा और खुला होना चाहिये और फर्नी- चर कम से कम होना चाहिये।

बाल साहित्य

जाड़ा

जाड़ा आया जाड़ा आया।
बिट्टो ने कंटोप लगाया॥
अम्मा लगी आग सुलगाने।
धूप लगी लड़कों को भाने॥
नानी भजन सुनाती ज्यादा।
चाय चाय चिल्लाने दादा॥
पहन रजाई का पैजामा।
भालू बन कर आए मामा॥
बन बागों में कुहरा छाया।
जाड़ा आया जाड़ा आया।

—श्रीनाथसिंह

नई पहेलियाँ

(१)

काला है पर कौवा नहीं—पेड़ चढ़े पर बन्दर नहीं।
कमर पतली पर चीता नहीं॥

(२)

मूली का सा चक्कता, दही का सा रङ्ग।
बतावो तो बतावो नहीं चलो हमारे सङ्ग॥

—कु० सविता देवी पांडे, बरेली

(३)

सारी जाली जल गई, जला न एको धागा।
घर के मानस पकड़ गये, घर खिड़की में से भागा॥

(४)

लाल कोतली हाय हाय के बीजा।

—कमल किशोर 'वियोगी' भोपाल

उत्तर—(१) चींटा। (२) रुपया। (३) मछली पकड़ने का जाल। (४) मिर्चा।

प्रश्न पिटारी

मोटे होंठ

प्रश्न—मेरे होंठ बहुत मोटे हैं। वे पतले और सुन्दर कैसे लगें?

उत्तर—होंठों पर 'लिपस्टिक' का प्रयोग इस प्रकार करें कि ऊपर और नीचे के दोनों होठों पूरे न रँगे जायँ। अपने होठों को जितना पतला दिखाना चाहती हैं। उतनी ही दूर तक लाली दौड़ावें। होंठ पतले दिखेंगे।

एक गिलास पानी पियो!

प्रश्न—कई बार पढ़ा है कि सुबह बिस्तर से उठते ही एक गिलास पानी पिओ। क्या बिना दतुअन कुल्ला किए ही। इससे लाभ क्या होता है? और पानी ठंढा हो या गरम।

उत्तर—प्रातः काल जो पानी पिया जाता है उसका ध्येय शरीर को शुद्ध करना होता है। स्वभावतः दतुवन कुल्ली के बाद यह पानी पीना चाहिए। यदि इसे जरा गरम कर लें और उसमें जरा सा नींबू डाल लें तो लाभ दूना होगा। यह पानी विजातीय द्रव्य को शरीर से बाहर निकाल फेंकने में सहायता देता है।

निर्दय पति

प्रश्न—मेरी शादी एक ऐसे पुरुष से हुई जिसके एक पत्नी पहले से मौजूद थी। पति मेरी सौत से बात भी नहीं करते थे और मुझे हमेशा साथ रखते थे। आज दो तीन महीने से मुझसे भी नहीं बोलते। घर से निकालते हैं। क्या करूँ।

उत्तर—एक ऐसे पुरुष से जिसके एक स्त्री पहले से मौजूद है, शादी करके आपने भूल की है। आपको यह सोचना चाहिये था कि जो अपनी पहली पत्नी को भुला सकता है वह दूसरी को भी भुला सकता है। आपको ऐसे पुरुष से शादी करने का उचित ही दण्ड मिला है। अब आपके लिए उचित यह है कि अपनी सौत से प्रेम बढ़ावें, अपने किये के लिए उससे माफ़ी माँगें और उसे अपने दुख सुख की साथिन बनावें। इस प्रकार तुम दोनों का जी कुछ हलका होगा।

...ाना या दु...

अपने विचार

नव वर्ष की बधाई

दीदी अपनी समस्त पाठिकाओं और पाठकों को नव वर्ष के उपलक्ष्य में हार्दिक बधाई देती है और कामना करती है कि उनका यह नववर्ष मंगलमय और सुख कर हो।

डालमिया और दीदी

आज जब कि 'दीदी' अपने निज के प्रेस से छप कर प्रकाशित हो रही है और कठिनाइयों के जिस समुद्र में सेठ डालमिया ने हमें फेंक दिया था, उससे तैर कर हम किनारे आ लगे हैं, हम एक विचित्र प्रकार के आनन्द और सन्तोष की साँस ले रहे हैं। आनन्द की इस घड़ी में सेठ जी और उनके सहयोगियों के अनुचित व्यवहार के लिए हम उन्हें क्षमा करते हैं और इस काण्ड को यहीं समाप्त करते हैं।

डालमिया : एक भ्रष्ट आदर्श

परन्तु इस सिलसिले में सेठ जी के सामाजिक आदर्शों के सम्बन्ध में हमें जो बातें मालूम हुई हैं उन्हें भुला देना हमारे लिए असम्भव हो रहा है। क्योंकि वे सार्वजनिक दृष्टिकोण से विचारणीय हैं। उनके द्वारा सेठ जी जो सामाजिक आदर्श रखने जा रहे हैं, वह दकियानूसीपन की पराकाष्ठा है।

और यही वह बात है, जिसका विरोध करने के लिए 'दीदी' ने जन्म ग्रहण किया है। अतएव आज वह सेठ रामकृष्ण डालमिया जैसे 'बड़े आदमी' का विरोध करना अपना पवित्र कर्तव्य समझती है।

सेठ रामकृष्ण डालमिया भारत के धन-कुबेर हैं। वे मारवाड़ी समाज के पुरुष रत्न माने गये हैं। उन्होंने अनेक क्षेत्रों में अपने पौरुष का परिचय दिया है जिसके लिए उनकी भूरि भूरि प्रशंसा की गई है। परन्तु आश्चर्य है कि हमारे भारत के यही नर पुंगव एक ऐसे क्षेत्र में अपने पुरुषार्थ का प्रदर्शन कर रहे हैं जो उनकी स्थिति के व्यक्ति के लिए शोभाजनक नहीं है। यह जानी हुई बात है कि उनकी अपनी पहली पत्नी मौजूद है और उनके एक कन्या भी है। परन्तु इधर अपनी ढलती हुई उम्र में शादी पर शादी करने की बात ठानी है। कुछ दिन हुए उन्होंने एक सिक्ख अध्यापिका से विवाह किया था और उस विवाह को चिरस्थायी बनाने के लिए 'वन' यानी 'एक' नाम का दैनिक पत्र निकालने का आयोजन किया था। खैर, कहा जाता है कि वह सिख पत्नी उनसे रूठ गई है। उनको मनाना तो अलग रहा, सेठ जी ने उन्हें सन्तप्त या अपने को संतुष्ट करने को एक नई दुलहन ले आने का आयोजन किया है। ये नई दुलहन हमारे हिन्दी के प्रसिद्ध पण्डित दुलारे लाल भार्गव की साली साहबा हैं जो एम० ए० पास हैं और शास्त्री भी हैं।

यह सब क्या है। कहाँ वह 'वन' का महान आदर्श और कहाँ यह विवाह लीला! जिस व्यक्ति ने अपने तेजस्विता से महामण्डल के ऋषि तुल्य श्री जी महाराज को मुग्ध कर लिया था, जो अपने महान् दानों से हिन्दू-आर्य-सङ्घ का एक आधार स्तम्भ बन चुका है और जिसकी उदार भावना ने प्रयाग के महिला विद्यापीठ को नवजीवन प्रदान किया वही व्यक्ति अपने उस वय में जब लोग रामकृष्ण जपना श्रेयस्कर समझते है, अठारह अठारह वर्ष की छोकड़ियों को अपनी पत्नी बना कर हमारे सामने जो आदर्श उपस्थित करता है उसकी कड़े से कड़े शब्दों में निन्दा होनी चाहिए। जिनको समाज सुधार से प्रेम है, जो देश की कुमारियों को आदर्श जीवन व्यतीत करने की कामना करते हैं उनका यह कर्तव्य है कि जगह जगह सभायें करके डालमियाँ की इस प्रवृत्ति की जोरदार शब्दों में निन्दा करें।

—श्रीनाथसिंह

दीदी का बङ्गाल-सहायता कोष

दीदी के बङ्गाल सहायता कोष में अब तक १२६७।-) प्राप्त हो चुके हैं। पूर्ण विवरण इस प्रकार है।

१२१४।-) गताङ्क के अनुसार।
३०) श्रीमती छोटी कुँवरानी साहबा चवाण जी सुरोठ।
१०) श्रीमती छोटाबाई द्वारा श्री सेठ सालिगराम नथानी, रायपुर।
१०) श्री हीरानन्द आलमचन्द रुपाणी, भीरिया रोड।
१) श्रीमती चन्द्रकान्ता देवी, सहू।
१) श्रीमती निर्मल कान्ता, अमृतसर।
१) श्री विपिनबिहारी लाल वैद्य, चित्रकूट।

१२६७।-) कुल।

एक स्त्री का नया संसार

विवाह के उपरान्त स्त्री अपने हृदय में आशाओं का एक नया संसार बसा लेती है जिसमें सौंदर्य, सन्तान, पति प्रेम और शारीरिक सारे सुख, यह चार आशायें मुख्य स्थान पाती हैं। परन्तु सौंदर्य इस नवयुग की श्रृङ्गार की सामग्री में, सन्तान पति प्रेम और शारीरिक सुख, अप्राकृतिक साधनों तथा देश विदेश की औषधियों में खोजती है जिसके फल स्वरूप उसकी सारी आशायें चकनाचूर हो जाती हैं। प्रथम गर्भ स्थित न होना, अकसर गर्भपात हो जाना, फिर सन्तान का रोगी, कम आयु की होना आदि कारणों से स्त्री का शरीर चिन्ताओं का घर हो जाता है जिससे स्वभाव चिड़चिड़ा शरीर पीला दिल दिमाग में घबराहट पैदा हो जाती है। परन्तु यह नहीं जानती कि इन नार्कीय रोगों का कारण उस अमूल्य सफेद द्रव्य का गिरना है जिससे मासिक धर्म बिगड़ जाता है फिर बेहोशी के दौरे पड़ने लगते हैं और अन्त में स्त्री तपेदिक का शिकार हो जाती है।

हर एक स्त्री को केवल एक सत्यता से परिचित होना चाहिये कि शास्त्रोक्त अशोक, अर्जुन, दशमूल अँगूरों का ताज़ा रस आदि अन्दर ही नारी का सौंदर्य, सन्तान की उत्पत्ति और शारीरिक सारे सुख छिपे हुए हैं और ऐसे दारुण दुखों में इनके अतिरिक्त और कोई औषधि कल्याणकारी हो ही नहीं सकती। जो देवियाँ यह समझ चुकी हैं कि यह रोग तो जा ही नहीं सकते, विशेषकर अधिक सन्तान की जननी होते हुए भी सर्वाङ्ग सुन्दरी रहना चाहती हैं वह १४ वर्ष की प्राचीन **गौड़ की नारीसुधा काँरडियल** सेवन करके अपनी समस्त चिन्ताओं का अन्त करें। **नारीसुधा** में क्या विशेषता है और वह एक स्त्री के लिये क्यों जरूरी है यह इसके निम्न लिखित नुसखे से स्पष्ट है:—

अशोक, अर्जुन—श्वेत प्रदर अनियमित ऋतु धर्म, गर्भपात, बांझपन तथा दिल की कमजोरी के लिए। **दशमूल**—पेढ़ू तथा अन्य अवयवों के दर्द के लिये। **तोदरी** और **बहमन**—पौष्टिक। **त्रिफला** रक्त शुद्धि तथा कब्ज़ के लिए। **झड़बेरी** और **कीकड़**—अत्यन्त रक्त वर्धक। **अङ्गूरों का रस**—खून मांस शक्ति वर्धक।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य जड़ी बूटियें और हैं और तत्काल परिचय देने वाला मूँगा **नारीसुधा** का प्रधान अङ्ग है। **नारीसुधा** सबसे पहले गर्भ सम्बन्धी अवयवों को दृढ़ और क्रिया शील करती है जिससे सहज ही स्वस्थ और सुन्दर सन्तान की जननी होने का गौरव प्राप्त होता है। गर्भपात फिर कदापि नहीं होता। मासिक धर्म ठीक समय ठीक मात्रा में होने लगता है जिससे हिस्टीरिया (बेहोशी) के दौरे शीघ्र नष्ट हो जाते है। इसके सेवन के तीसरे दिन ही शरीर में एक नई शक्ति का सञ्चार प्रतीत होता है क्योंकि खूब भूख लगती है और खून एक बड़ी मात्रा में बनने लगता है। चेहरे का पीलापन मिटा कर अपूर्व सौंदर्य पैदा करती है। गर्भावस्था और बाद का सेवन माँ के दूध का जहरीलापन नष्ट करके बालक को दीर्घजीवी और माँ को स्वस्थ करता है। **नारीसुधा** (जिसकी २६ खुराकों की एक बोतल का मूल्य पैकिंग वी० पी० खर्च से पृथक तीन रुपये पाँच आने है) श्वेत प्रदर (लिकोरिया) की एक मात्र दवा है जिसे यह केवल सात दिन में नष्ट कर देती है। आवश्यकता पर इस मासिक पत्रिका का हवाला देकर—

कुमार कुमार ऐण्ड कम्पनी, देहली, से मगाइये।

नारी का अधिकार

मुगल चित्रकला के सूक्ष्म सौन्दर्य और शालीनता के आवरण में गृहिणी रूप में नारी की जिस महिमान्वित मूर्ति का विकाश हुआ है, वह हमें परम प्रिय और श्रद्धेय है। इस युग में पड़ोस की महिलायें जब आपके घर आती हैं तब उन्हें चाय पिलाने में भी वही महिमा और सौन्दर्य प्रकट होता है। आपलोगों की खुले दिल की बातचीत में चाय से ही सौन्दर्य व सुरुचि का भाव आता है। जब आप सब इकट्ठी होती हैं तब चाय ही अंतरंगता की लहर ला देती है। इसीलिये महिला-जगत में चाय आज इतनी प्रिय है। सखी-सहेलियाँ जब आप के घर आँय तो चाय पिलाकर उन्हें तृप्त किया कीजिये।

★

"नित्य कर्म" नामक हमारी सचित्र पुस्तिका पढ़कर देखिये, दैनिक जीवन में चाय का स्थान कितना ऊँचा है। इस विज्ञापन को काट, अपना नाम और पता साफ-साफ लिखकर, कमिश्नर फौर इण्डिया, इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड, पोस्ट बक्स नम्बर २१७२ कलकत्ता के पते पर भेज दीजिये। पुस्तिका की एक प्रति आपको बिना-मूल्य भेज दी जायगी।
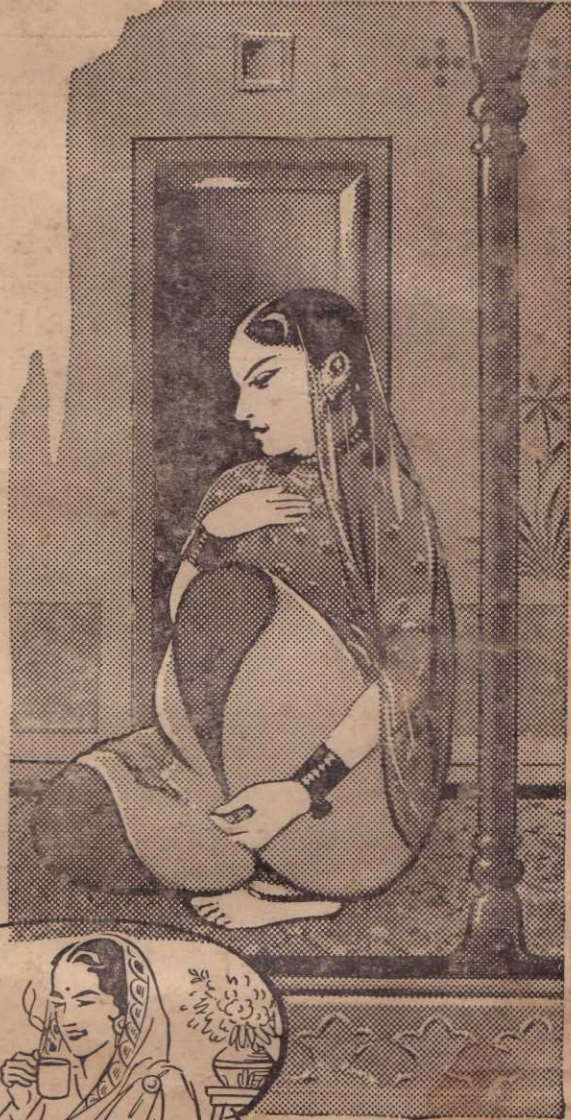
भारतीय चाय

एकमात्र पारिवारिक पेय

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

IK 205

Printed and publishd by Shrinath Singh at the